ओ३म्

अध्यात्म प्रकाशन

वैदिक सत्संग पद्धति

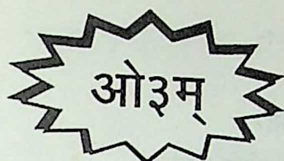


स्वर्गीय श्रीमती प्रेम लता की
पुण्य स्मृति में सप्रेम भेंट
गैंद परिवार

सम्पादक

आचार्य द्विजेन्द्र शास्त्री

एम. ए. (हिन्दी, संस्कृत) एम. फिल्., शिक्षा शास्त्री



अध्यात्म प्रकाशन

वैदिक सत्संग पद्धति

सन्ध्या, प्रार्थना, स्वस्तिवाचन, शान्ति-प्रकरण, प्रधान-हवन, संगठन सूक्त, आर्यसमाज के नियम एवं मनोहर भजन

सम्पादक

आचार्य द्विजेन्द्र शास्त्री

एम. ए. (हिन्दी, संस्कृत) एम. फिल्., शिक्षा शास्त्री

पुस्तक प्राप्ति स्थान :-

1. आर्य समाज मन्दिर
जे-3/206-207 राजौरी गार्डन
नई दिल्ली-110027

2. जे-7/98, द्वितीय तल
राजौरी गार्डन,
नई दिल्ली-110027
दूरभाष - 25410369, 55423515
E-mail : dwijendrashastri@yahoo.co

मूल्य— 17/-

सृष्टि संवत् - 1, 97 , 29, 49, 105
विक्रमी संवत् - 2061
शक संवत् -
दयानन्दाब्द - 180

मुद्रण व टंकण :—
Thomson Printers
Ph.: 9891402431

प्राक्कथन

वैदिक संस्कृति में यज्ञ को विश्व-संचालन का नाभि=केन्द्र माना गया है– अयं यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः। इसीलिए आदि सृष्टि से आज तक समस्त भारतवासी चाहे वे किसी भी शास्त्रीय परम्परा, शाखा, सम्प्रदाय अथवा प्रान्त से सम्बद्ध हों यज्ञ के प्रति न केवल श्रद्धा व आस्था का भाव रखते हैं। अपितु पारिवारिक, अथवा सामाजिक शुभ अवसरों पर यज्ञ-अनुष्ठान का आयोजन श्रद्धाभाव से करते-कराते हैं।

सभी श्रद्धालुजन यज्ञ की प्रक्रियाओं का सहज व सरल भाव से सम्पादन कर सकें इसी भावना से वैदिक सत्संग पद्धति-पुस्तिका आपके हाथों में समर्पित है। इससे पूर्व इसके दो संस्करण आर्य सत्संग गुटका के नाम से छप चुके हैं, जिन्हें काफी सराहा गया। उसी में कुछ परिवर्त्तन, परिवर्द्धन कर तथा छह विशिष्ट सूक्तों का समावेश कर अधिक उपयोगी बनाने का प्रयास किया गया है। ईश-भक्ति के भजनों की संख्या भी बढ़ाई गई है। आशा है पहले की भांति आपका स्नेह व आर्शीवाद मिलता रहेगा। इसे और अधिक उपादेय बनाने के लिए सुधीजन के सुझाव-निर्देश शिरोधार्य होंगे।

विदुषां वशंवद–
द्विजेन्द्र कुमार शास्त्री
जे-7/98, द्वितीय तल
राजौरी गार्डन, नई दिल्ली

ईशवन्दना

नमस्ते सते ते जगत्कारणाय,
नमस्तेचिते सर्वलोकाश्रयाय।
नमोऽद्वैततत्वाय मुक्तिप्रदाय,
नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय।।1।।
त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं,
त्वमेकं जगद्धारकं स्वप्रकाशम्।
त्वमेकं जगत् कर्त्तृपातृप्रहर्त्तृ,
त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम्।।2।।
भयानां भयं भीषणं भीषणानां,
गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम्।
महोच्चैः पदानां नियन्तृत्वमेकं
परेषां परं रक्षणं रक्षणानाम्।।3।।
वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो
वयं त्वां जगत् साक्षिरूपं नमामः।
सदेकं निधानं निरालम्बमीशं
भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः।।4।।

।। प्रातः काल पढ़ने के मंत्र ।।

ओम्, प्रातरत्नं प्रातरित्वा दधाति तं चिकित्वान् प्रतिगृह्या निधत्ते। तेन प्रजां वर्धमान आयुरायस्पोषेण सचते सुवीरा ः।।१।।

(ऋ. १/१२५/१)

जो विशेष ज्ञानवान्, प्रातः काल में जागने वाला, सुन्दर वीर मनुष्य प्रातः रमण करने योग्य आनन्दमय पदार्थ को धारण करता है, ले-देकर उसे नित्य धारण करता है, उससे धन और पुष्टि को प्राप्त कर सन्तान और आयु को बढ़ाता हुआ नित्य सुखी होता है।

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातस्सोमुत रूद्रं हुवेम ।।2।।

प्रातः काल हम प्रकाश स्वरूप, परमैश्वर्य के दाता प्राण, उदान के समान प्रिय और जिसने सूर्य चन्द्र को उत्पन्न किया है, उस परमात्मा का आह्वान करते हैं। ऐश्वर्ययुक्त, पुष्टिकर्त्ता, वेद तथा ब्रह्माण्डपति, सौम्य स्वभाव तथा पापियों को रुलाने वाले ईश्वर की स्तुति करते हैं। ।।2।।

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ।।3।।

प्रातः पांच घड़ी रात्रि रहे, जयशील, ऐश्वर्य के दाता तेजस्वी, अन्तरिक्ष के पुत्र सूर्य की उत्पत्ति करने हारा और जो (सूर्यादि लोकों का) विशेष धारण करने हारा, सब ओर से धारण करता है, जिस किसी का भी जानने हारा, दुष्टों को दण्ड देने वाला और सबका प्रकाशक है, उस भजनीय ब्रह्म का मैं सेवन करता हूँ।।3।।

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम।।4।।

हे भजनीय प्रेरक, ऐश्वर्यप्रद, सत्य धन के देने हारे, ऐश्वर्यदाता हमें वह बुद्धि दीजिये और रक्षा कीजिये। हे प्रभो आप गाय तथा घोड़ों

आदि को हमारे लिये दीजिये, हे ईश्वर, हम लोग उत्तम मनुष्यों वाले और वीर मनुष्यों वाले अच्छी प्रकार होवें। ।4।।

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम।।5।।

हे भगवान्, आपकी कृपा और अपने पुरुषार्थ से हम लोग उत्तमता को प्राप्त करें और ऐश्वर्य युक्त होवें और हे धन के दाता सूर्योदय के समय विद्वानों की उत्तम संगति और सुमति और सुमति में हम लोग प्रवृत्त होवें। ।5।।

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह।।6।।

(ऋ. 7/41/1-5)

हे सकलैश्वर्य सम्पन्न जगदीश्वर, जिससे आपकी सब सज्जन निश्चय करके प्रशंसा करते हैं सो आप हे ऐश्वर्यप्रद, इस संसार और हमारे घर में अग्रगामी हों और जिससे सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त आप ही हमारे पूजनीय देव होवें। इससे हम विद्वान् लोग सकल ऐश्वर्य सम्पन्न होवें। ।6।।

(पद्यात्मक अर्थ)

तमोमय दोषा हुई व्यतीत।
प्रातः काल की बेला आई, पावन-परम-पुनीत।।
प्रातः अग्नि अक्षय प्रकाश को, प्रातः इन्द्र वैभव निवास को।
प्रातः वरुण बलनिधि विक्रम को, प्रातः मित्र प्रिय प्राणोपम को।
प्रातः ब्रह्मणस्पति के धन को, प्रातः सेवानीय उस पूषण को।
प्रातः सोम को प्रात रूद्र को, भजते भक्त विनीत।।1।।
प्रातः उग्र शुचि प्रभावन्त का, जय स्वरूप वैभव अनन्त को।
राजा खल शासन कर्त्ता का, लोका दिव्य आदि धर्त्ता का।
मन्यमान सर्वज्ञ सभी का, भग भजनीय देव अवनी का।

सेवनीय आराध्य देव का, हम गाते शुचि गीत।।2।।
सर्वप्रणेता प्रेरक भग हे, सत्य-वित्त संप्रेषक भग हे।
दो वरदान हमें प्रज्ञा का, भार वहन कीजे रक्षा का।
गोधन, वाजि सुभग पशुधन से, हमें समृद्ध करो धन-जन से।
हम होवें सम्यक् नृवन्त बँध, सुजन नेह उपवीत।।3।।
हम उत्कर्ष प्राप्ति में इस क्षण हों भगवन्त पूज्यवर भगवन्।
औ मध्याह्न मध्य भी जीवन, हो भगवन्त हमारा भगवन्।
सूर्योदय बेला में पावन, दिव्य सुमति-युत हों हम शोभन।
देवों के अनुकूल सुमति-युत, हों हम दिव्य प्रतीत।।4।।
सुभग बनें भगवान् हमारे, पथ-दर्शक जीवन उजियारे।
हो जावें सौभाग्यवान हम, सकल देवजन तुमसे प्रियतम।
हों धन-धान्यवान् हम भगवान् करते मुक्त कण्ठ तव वन्दन।
होवें हम तव कृपा कोर से, धन-वैभव के मीत।।5।।

।। सोते समय पढ़ने के मन्त्र ।।

ओम्, यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिव-संकल्पमस्तु।।1।।

हे परमत्मा! जो जागते हुए पुरूष का दिव्यगुण वाला मन दूर चला जाता है और वही मन सोए हुए का उसी प्रकार चलता रहता है। जो दूर-दूर ले जाने वाला विषय-प्रकाशन करने वाली इन्द्रियों का एक प्रकाशक है, वह मेरा मन शुभ विचार वाला हो।।1।।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषुधीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।2।।

जिस मन द्वारा कर्म के जानने वाला धीर पुरुष यज्ञ अर्थात् धर्म-व्यवहार में कामों को करते हैं और जो प्राणियों के भीतर अद्भुत और पूजनीय है, वह मेरा मन शुभ विचार वाला हो।।2।।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।3।।

जो मन ज्ञान का उत्पादक, स्मरणशक्ति और साधारण शक्ति का आधार है, जो जीती-जागती ज्योति प्राणियों के भीतर है, जिनके बिना कुछ भी काम नहीं किया जाता, वह मेरा मन शुभ विचार वाला हो।।3।।

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।4।।

प्रभो! जिस अमर मन के द्वारा तीनों काल का सब वृत्तांत सर्वथा जाना जाता है, जिसके द्वारा सात हवन करने वालों से पूरा किया हुआ पूजनीय कर्म फैलाया जाता है, वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो।।4।।

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः। यस्मिꣳश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।5।।

हे परमात्मन्! ज़िस मन में चारों वेदों का ज्ञान इस प्रकार विद्यमान

।। सोते समय पढ़ने के मन्त्र ।।

है जैसे रथ के पहिये में अरे अटके रहते हैं, वह मेरा मन भलाई का ही विचार करने वाला हो।।5।।

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।6।।

(यजु. 34/1-6)

प्रभो! जो मन मनुष्य को लगातार लिए फिरता है जैसे चतुर सारथि बागडोर से वेग वाले घोड़ों को। जो हृदय में ठहरा हुआ, सबको चलाने वाला, बड़ा ही वेग वाला है, वह मेरा मन मंगल विचारयुक्त हो।।6।।

अग्ने त्वं सुजागृहि वयं सुमंदिषीमही।
रक्षाणो अप्रयुच्छन् प्रबुधे नः पुनस्कृधि।।7।।

हे अग्ने, आप हमें जागने के समय अच्छी प्रकार से जगाते हो जिससे हम लोग आनन्द पूर्वक सोते हैं। आप प्रमाद रहित होकर हम लोगों की रक्षा करें, हम बार-बार आपसे उत्तम व्यवहार प्राप्त करते रहें।।7।।

(पद्यार्थ)

प्रभो जागते हुए सदा जो दूर-दूर तक जाता है।
सोते में भी दृष्टि से, कोसों दौड़ लगाता है।
दूर-दूर वह जाने वाला, तेजों का भी तेज निधान।
नित्युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्।।1।।
जिसके द्वारा बुद्धिमान् सब, नाना करतब करते हैं।
सत्कर्मों को करें मनीषी, वीर युद्ध में मरते हैं।

पूजनीय अतिशय जिसका है, प्रजावर्ग में अद्भुत् मान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से वह मन मेरा हो भगवान्।।2।।

जिसमें धैर्य-शक्ति-चिन्तन की, तथा ज्ञान रहता भरपूर।
प्राणिमात्र में अमृतमय है, अरु प्रकाश का बहता पूर।
जिसके बिना नहीं चलता है, निश्चय कोई कार्य विधान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्।।3।।

अमर तत्व जो त्रय कालों का, भेद यथावत पाता है।
बुद्धि, ज्ञान की पाँच इन्द्रियाँ, अहंकार से नाता है।
इन्हीं सप्त ऋत्विज् का फैला, जिसमें निशदिन यज्ञ वितान।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान् ।।4।।

चार वेद निगमागम सारे, इष्ट ज्ञान के सुन्दर स्रोत।
रथ के पहिये में ज्यों आरे, एवं रहते ओतप्रोत।
जंगम जग का चित्त अचल हो, जिसमें रहता निष्ठावान्।
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्।।5।।

जो जन कुल को बागडोर से, इधर-उधर ले जाता है।
चतुर सारथी ज्यों घोड़े को, उत्तम चाल चलाता है।
सदा प्रतिष्ठित हृदयदेश में, विपुल तीव्र गति अजर महान्
नित्य युक्त शुभ संकल्पों से, वह मन मेरा हो भगवान्।।6।।

।। सामान्य प्राणायाम की विधि ।।

पद्मासन या किसी आसन से जिससे सुखपूर्वक उस समय तक (बिना आसन बदले) बैठ सको जितनी देर क्रिया करना इष्ट है, बैठ जाओ, इस प्रकार कि छाती, गला और मस्तिष्क तीनों एक सीध में रहें और धीरे-धीरे नाक की राह से श्वास बाहर निकालो (रेचक);

(1) और उसे बाहर ही रोक दो (बाह्य कुम्भक);

(2) जब अधिक देर बिना श्वास लिये न रह सको तो धीरे-धीरे पूरक करो (श्वास को भीतर खींचो) और श्वास को भीतर रोक दो। (आभ्यन्तर कुम्भक)

(3) जब और अधिक समय कुम्भक (भीतर श्वास रोके रखना) न कर सकें तो धीरे-धीरे रेचक करें।

(4) इसी प्रकार अनेक बार अभ्यास करें और प्रत्येक क्रिया के साथ-साथ महाव्याहृतियों (प्राणायाम मन्त्र) का मानसिक जप करते रहें, जिह्वा से काम लेने की जरूरत नहीं है।

इस प्रणायाम से रेचक, पूरक और कुम्भक अर्थात् प्राणायाम की प्रत्येक क्रिया करने का अभ्यास होता है जिससे आगे के प्राणायामों के करने की शक्ति मनुष्य में आती है। इस प्राणायाम का अभ्यास इतना बढ़ाना चाहिए जिससे दो मिनट तक श्वास भीतर रुक सके। अधिक सामर्थ्य बढ़ने से अधिक लाभ है, परन्तु एक बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिये कि प्रसन्नता से जितनी देर श्वास रुक सके रोको, चित्त पर जबरदस्ती नहीं करना चाहिये। अभ्यास से उत्तरोत्तर बाहर और भीतर

दोनों ओर श्वास रोकने की अवधि स्वयमेव बढ़ती है।

सुदीर्घ, स्वस्थ, सक्रिय एवं आह्लादमय जीवन चाहने वाले प्रत्येक नर-नारी को प्रतिदिन नियमित रूपेण प्राणायाम अवश्य करना चाहिए। प्राणायाम हमेशा खाली पेट करें और ध्यान रखें कि प्राणायाम खुले एवं शुद्ध वायु स्थान पर ही करें अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि की संभावना रहती है। ब्राह्म-मुहूर्त्त से लेकर सूर्योदय तक का काल प्राणायाम के लिए श्रेष्ठ माना गया है। इस समय वायुमण्डल में प्रदूषण कम होता है।



ब्रह्मयज्ञः

(संध्योपासन विधिः)

।। गायत्री मन्त्रः ।।

ओ३म्, भूर्भुवः स्वः।
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।

(ऋ. मं. 3/सू. 63/म. 10 यजु0 36/3)

भावार्थः-

हे प्राण-स्वरूप, दुःख-विनाशक, आनन्द-प्रदाता सविता देव! आप हमें अपना दिव्य-विज्ञान रूपी प्रकाश प्रदान करें, हमें सद्बुद्धि का उत्तम दान देकर हम पर कृपा करें। जिससे हम सदैव अपनी पवित्र बुद्धि से प्रेरित होकर, श्रेष्ठ-कार्य करते रहें।

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
तुझसे ही पाते प्राण हम, दुखियों के कष्ट हरता है तू।।

तेरा महान तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु-वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान।।

तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, तू श्रेष्ठ मार्ग पर चला।।
भगवन् हमारी बुद्धि को, नेक राह पर चला।।

इस मन्त्र का पाठ करते हुए शिखा-बन्धन करें यदि शिखा न हो तो शिखा का ध्यान करें।

।। आचमन क्रिया ।।

दाहिनी हथेली में उतना ही जल लेना चाहि, जो कण्ठ से नीचे छाती तक पहुंचे, अधिक नहीं। आचमन करते हुए मुंह से किसी प्रकार का शब्द नहीं होना चाहिए।

।। अथ आचमनमन्त्रः ।।

निम्न मंत्र से सर्व व्यापक प्रभु से सुख की कामना करते हुए जल से तीन आचमन करें।

ओम्, शं नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभि स्रवन्तु नः।।

(यजु0 36/12)

भावार्थः-

हे सर्वव्यापक प्रभो! आप दिव्य गुण तथा आनन्द से युक्त हैं हमें भी मनोवांछित आनन्द प्रदान करने के लिए, कल्याणकारक सुख-शान्ति की सब आरे से वृष्टि करें।

देवी स्वरूप ईश्वर, पूरण अभीष्ट कीजे।
यह नीर हो सुधामय, कल्याण दान दीजे।।

।। अथेन्द्रियस्पर्शमन्त्राः ।।

निम्न मंत्रों से बायीं हथेली में जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा-अनामिका (बीच की दोनों) अंगुलियों से जल के द्वारा दाहिनी ओर से बायीं और निर्दिष्ट इन्द्रियों का स्पर्श करते हुए इन्द्रियों की स्वस्थता एवं दृढ़ता के लिए ईश्वर से प्रार्थना करें–

ओम्, वाक् वाक्।	इस मंत्र से मुख का दक्षिण और वाम पार्श्व स्पर्श करें।
ओम्, प्राणः प्राणः।	इससे दक्षिण और वाम नासिकाओं के छिद्र।
ओम, चक्षुः चक्षुः।	इससे दक्षिण और वाम नेत्र।
ओम, श्रोत्रम् श्रोत्रम्।	इससे दक्षिण और वाम-कान।
ओम्, नाभिः।	इससे नाभि।
ओम, हृदयम्।	इससे हृदय।
ओम, कण्ठः।	इससे कण्ठ।
ओम्, बाहुभ्यां यशोबलम्।	इससे दोनों भुजाओं के मूल स्कन्ध।
ओम्, करतलकरपृष्ठे।	इससे दोनों हाथों के ऊपर के तल स्पर्श करें।

भावार्थः-

हे परम दयालु परमात्मन्! मेरी वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, नाभि, हृदय, कण्ठ, शिर, भुजायें और हथेलियाँ, सभी आपकी कृपा से यश और बल वाली होवें।

तन-मन-वचन से होंगे, हम शुद्ध कर्मचारी।
दुष्कर्म से बचेंगी, ये इन्द्रियाँ हमारी।
वाणी विशुद्ध होगी, प्रिय प्राण शक्तिशाली।

होंगी हमारी आँखें, शुभ-दिव्य-ज्योति वाली।
ये कान ज्ञान भूषित, नाभि महत् सुखारी।
होगा हृदय दयामय, निर्मल नृधर्म-धारी।
भगवान् तेरी गाथा, गायेगा कण्ठ मेरा।
सिर में सदा रहेगा, गौरव अनन्त तेरा।
होंगे ये हाथ मेरे, यश-ओज-तेज धारी।
मेरी हथेलियाँ ये, होंगी पवित्र प्यारी।।

।। अथ मार्जन मन्त्रः ।।

निम्न मंत्रों से बायें हाथ की हथेली में जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा, अनामिका और अंगूठे से अथवा कुशाओं से यथानिर्दिष्ट अंगों पर जल छिड़कते हुए ईश्वर से उन लोगों की पवित्रता व शुद्धि के लिए प्रार्थना करें–

ओम्, भूः पुनातु शिरसि। इस मन्त्र से शिर पर।
ओम्, भुवः पुनातु नेत्रयोः। इस मन्त्र से दोनों नेत्रों पर।
ओम्, स्वः पुनातु कण्ठे। इस मन्त्र से कण्ठ पर।
ओम्, महः पुनातु हृदये। इस मन्त्र से नाभि पर।
ओम्, तपः पुनातु पादयोः। इस मन्त्र से दोनों पगों पर।
ओम्, सत्यं पुनातु पुनः शिरसि। इस मन्त्र से पुनः शिर पर।
ओम्, खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र। इस मन्त्र से सब अंगों पर जल छिड़कें।

भावार्थः-

हे प्रभो! मेरे सिर में, नेत्रों में, कण्ठ में हृदय में, नाभि में, पैरों

में पवित्रता उत्पन्न कर दो। पर इसके लिए दृढ़ विचार की आवश्यकता है, इस कारण आप मेरे मस्तिष्क के विचारों को बार-बार पवित्र करते हुए, मेरे शरीर के समस्त अंगों को बलिष्ठ व पवित्र बना दो।

प्राणों के प्राण प्रभुवर! मस्तक पवित्र कर दो।
पावन पिता! दया कर, आँखों में ज्योति भर दो।
आनन्दमय अधीश्वर! हमको सुकण्ठ दीजे।
मेरे हृदय-सदन में, सर्वेश वास कीजे।
जग के पिता हमारी, हो नाभि निर्विकारी।
पद भी पवित्र होवे, हे ज्ञान-ज्योतिधारी!
पुनि-पुनि पवित्र सिर हो, हे सौम्यरूप स्वामी!
सर्वांग शुद्ध होवे, व्यापक विभो नमामी।।

।। अथ प्राणायाम मन्त्रः ।।

निम्न मंत्रों के अर्थों की मन में भावना करते हुए #कम से कम तीन प्राणायाम करें–

ओम् भूः। ओम् भुवः। ओम् स्वः। ओम् महः। ओम् जनः। ओम् तपः। ओम् सत्यम्।।

भावार्थः-

हे प्राण स्वरूप, दुःखहर्त्ता और व्यापक आनन्द के देने वाले प्रभो! आप महनीय, पूजनीय, जगत् के उत्पादक तथा सबको ज्ञान प्रदान करने वाले हैं। आप सत्य स्वरूप हैं, इस कारण हे पिता! हमें भी आप आत्मिक, मानसिक और शारीरिक बल प्रदान करें। तथा सत्यमार्ग पर चलने की प्रेरणा दें।

नमो ओं आनन्द शान्ति प्रदाता,

नमो भूः प्राणों के हो प्राणदाता।
नमो हे भुवः दुख हर लेने वाले,
नमो स्वः सुखी भक्त आश्रय तुम्हारे।
नमो महः ब्रह्म आदित्य रूपम्,
नमो हे जनः सृष्टिकर्त्ता अनूपम।
नमो तपः दुःख नाशक पिता हो,
नमो सत्य सर्वज्ञ सबके सखा हो।
सभी हम प्रभो! अब शरण आपकी हैं,
हुई दूर बाधा जो भवताप की है।

।। अथ अघमर्षण मन्त्राः ।।

निम्न मंत्रो से प्रभु की सर्वव्यापकता, शक्तिमत्ता और सृष्टि-रचना का चिन्तन करते हुए स्वयं को पापों-दुष्कर्मों से बचाने के संकल्प और किए हुए पाप कर्मों का मर्षण-प्रायश्चित्त करना चाहिए–

ओम्, ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ।।1।।
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहो रात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी।।2।।
सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः ।।3।।

भावार्थः-

संसार के विधाता उस महान् प्रभु ने अपने नियमों के अन्तर्गत जैसे पूर्व कल्प में भी सृष्टियों की रचना की थी, उसी प्रकार वर्तमान कल्प में भी इस सृष्टि का सृजन किया। जिससे प्रत्येक जीव

अपने-अपने भोगों का भोग प्राप्त कर सकें, तथा मनुष्य जैसे श्रेष्ठ प्राणी, सर्वज्ञ प्रभु की अनन्तता और सर्वज्ञता का अनुभव करते हुए पाप से पृथक् होने तथा श्रेष्ठ कर्म करने का उत्तम लाभ प्राप्त कर सके।

ऋत-सत्य से ही तूने, संसार को बनाया।
तेरा ही दिव्य कौशल, है सिन्धु ने लखाया।
पहले कि कल्प जैसे, रवि-चन्द्र को रचाया।
दिन-रात-पक्ष-संवत्, मय काल को सजाया।
द्यौ-अन्तरिक्ष, धरणी, सब नेम पर टिकाये।
तू रम रहा सभी में, तुझमें सभी समाये।

।। अथ मनसा परिक्रमा मन्त्राः ।।

मन अत्यन्त चंचल और पुरुषार्थी है अतः उसे सुस्थिर करने के लिए निम्न मंत्रों के अभिप्राय का ध्यान करते हुए पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, नीचे और ऊपर, सभी दिशाओं में प्रभु की विभिन्न शक्तियों और कार्यों का बोध करते हुए घुमा-फिराकर एवं थकाकर मन को प्रभु शरण में लाने का प्रयास करना चाहिए।

ओम्, प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षिताऽऽ दित्या इषवः तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयंद्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।1।। (अथर्व. 3/27/1)

भावार्थः-

हे प्रभो! आप सब जगत् के प्रकाशक हैं तथा हमारे समक्ष हर-क्षण उपस्थित हैं। आप ही हमारे बन्धों को दूर करने वाले हैं। हम आपके नियमों का कभी उल्लंघन नही कर सकते। अतः आप हमें कल्याण की ओर प्रेरित करें। हम सत्कर्मों से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में आपकी कृपा से समर्थ हों। हमारी उन्नति देखकर यदि हमसे कोई द्वेष करता है, या दूसरे की उन्नति देखकर हम उससे द्वेष करते हैं, तो आप हमें अपने इषुओं द्वारा हमारा उचित मार्ग-दर्शन करते हैं। हे प्रभो! कृपा करो कि हम श्रेष्ठ गुणों का दर्शन-प्रदर्शन कर सभी प्राणियों के साथ मित्रवत् व्यवहार कर पधार्थ छूट गया है एक दूसरे के रक्षक बनें।

हे ज्ञानमय प्रकाशक बन्धन विहीन प्यारा।
प्राची में रम रहा तू रक्षक पिता हमारा।।
रवि रश्मियों से जीवन-पोषण-विकास पाता।
अज्ञान के अन्धेरे में तू प्रभा दिखाता।।
हम बार-बार भगवान् करते तुम्हें नमस्ते।
जो द्वेष हों परस्पर तेरे न्याय हस्ते।।

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।2।। (अथ. 3/27/2)

भावार्थः-

हे प्रभो! आप दाहिनी ओर भी ऐश्वर्य के अधिपति के रूप में विराजमान हैं। आप कुत्सित कर्म करने वाले प्राणियों से हमारी रक्षा करने वाले हैं। ज्ञानी पुरुषों के उपदेश रूपी विचारों से हमारी रक्षा करने वाले हैं। आप हम पर कृपा करें, कि हम सदैव विद्वानों के निर्देशन में सत्य-मार्ग पर चलते रहें। इसलिए हम आपको तथा अन्य विद्वान् रूपी देवों को बारम्बार नमस्कार करते हैं। हमारी उन्नति देखकर यदि कोई हमसे द्वेष करता है, या हम किसी की उन्नति देखकर उससे द्वेष करते हैं, उसे हम अपनी न्याय-व्यवस्था पर छोड़ देते हैं। आप हमारा सम्यक् मार्ग-दर्शन कर, हम पर कृपा करें।

हे इन्द्ररूप भगवान्! दक्षिण में भी दिखाता।
जड़-जीव जन्तुओं से, तू ही हमें बचाता।
वैदिक सुधा पिलाता, तू ही ज्ञानियों के द्वारा।
तुझसे लगन लगी है, सर्वस्व तू हमारा।
हम बार-बार भगवन्! करते तुम्हें नमस्ते।
जो द्वेष हो परस्पर, वह तेरे न्याय हस्ते।।

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।3।।

(अथर्व. 3/27/3)

भावार्थः-

हे पश्चिम दिशा के स्वामिन्! आप सबसे महान् तथा सबके स्वामी हैं। आप दुःखी प्राणियों के दुःखों को दूर करने वाले तथा

समस्त भोग्य पदार्थों के देने वाले हैं। आप हमें अन्नादि पदार्थों का दान देकर हमारे प्रत्येक अभाव को दूर करने की कृपा करें। इसलिए हम आपको तथा आपके द्वारा प्रेरित, दिव्य शक्तियों को बारम्बार नमस्कार करते हैं। हमारी उन्नति देखकर यदि हमसे कोइ द्वेष करता है, अथवा किसी की उन्नती देखकर अज्ञानतावश यदि हम उससे द्वेष करते हैं, तो हे परमात्मन्! उसे हम आपकी न्याय-व्यवस्था पर छोड़ देते हैं। आप हमारा सम्यक् प्रकार से मार्गदर्शन कर, हमारी रक्षा करें।

पश्चिम में वास तेरा, तू ही वरुण कहाता।
विषधारियों के भय से हमको सदा चलाता।
सब प्राणियों का पोषण, करता है अन्न द्वारा।
दुःख में तू ही है साथी, सर्वस्व तू हमारा।
हम बार-बार भगवन्! करते तुम्हें नमस्ते।
जो द्वेष हो परस्पर, वह तेरे न्याय हस्ते।।

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्म : ।।4।। (अथर्व. 3/27/4)

भावार्थः-

हे उत्तर दिशा के स्वामी परमात्मन्! आप अपने सोम स्वरूप से समस्त जगत् को शान्ति और रस के परिपूर्ण करने वाले हैं। आप अपने सामर्थ्य से आसुरी शक्तियों का विनाश कर, सदैव हमारी रक्षा करते हैं। हम आपके सामर्थ्य रूप इषुओं के द्वारा रक्षा प्राप्त करने के

लिए, बारम्बार आपको विनम्रता पूर्वक नमस्कार करते हैं। हमारी उन्नति देखकर यदि हमसे कोई द्वेष करता है, या अज्ञानतावश हम किसी की उन्नति देखकर उससे द्वेष करते हैं, तो हे परमात्मन्! उसे हम आपकी न्याय-व्यवस्था पर छोड़ देते हैं। आप हमारा सम्यक् मार्गदर्शन कर, हमारी हर प्रकार से रक्षा करें।

हे सोमरूप स्वामी! उत्तर दिशा निहारा।
तेरी उपासना है, भव-सिन्धु में सहारा।
विद्युत बनाके तूने, भूलोक जगमगाया।
जीवों मे उसकी सत्ता संचार कर सजाया।
हम बार-बार भगवन्! करते तुम्हें नमस्ते।
जो द्वेष हो परस्पर, वह तेरे न्याय हस्ते।।

ध्रुवा दिग् विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।5।। (अथर्व. 3/27/5)

भावार्थः-

हे नीचे की दिशा में भी व्यापक स्वामिन्! आप हमारे हृदय से अज्ञानान्धकार रूपी शत्रु का विनाश कर, हमारी रक्षा करने वाले हैं। आपकी कृपा द्वारा प्रदत्त वेद ज्ञान रूपी उपदेश, हमारे जीवन की मलिनताओं को नष्ट करने वाला है। वेद ज्ञान रूपी इषुओं से अज्ञान को समाप्त कर, हमारे जीवन की आप विविधि प्रकार से रक्षा करने वाले हैं। हमारी उन्नति देखकर यदि कोंई हमसे द्वेष करता है, या हम अज्ञानतावश किसी के साथ द्वेष की भावना रखते हैं, तो हे परमात्मन्!

उसे हम आपकी न्याय-व्यवस्था पर छोड़ देते हैं। आप हमें श्रेष्ठ बुद्धि का दान देकर, हमारा सम्यक् मार्गदर्शन कर, हमारी रक्षा करें।

हे विष्णु सर्वव्यापी! दृढ़ता हमें सिखाओ।
कर्तव्य में निरत रह, हसना हमें बताओ।
रक्षण तू कर रहा है, सन्तान-वत हमारा।
दुःख-सुख सभी समय में, साथी सखा हमारा।
हम बार-बार भगवान्! करते तुम्हें नमस्ते।
जो द्वेष हो परस्पर, वह तेरे न्याय हस्ते।।

ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।6।। (अथर्व. 3/27/6)

भावार्थः-

हे ऊपर की दिशा के महान् अधिपति! आप अपनी प्रेरणा देकर बाह्य जगत् से प्राप्त दुःख व अज्ञान से हमें बचाकर, अपनी महान् दयालुता से हमारी रक्षा करते हैं। आपकी ज्ञानमयी वृष्टि ही बाह्य दुःख और अज्ञान को नाश करने वाला इषु है। आप हमें अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाकर, सदैव दुःख से दूर रहने की प्रेरणा देकर, हमारा कल्याण करते हैं। ऐसे कृपालु दाता की हम सब बारम्बार वन्दना करते हैं। हमारी उन्नति देखकर यदि हमसे कोई द्वेष करता है या दूसरों की उन्नति देखकर अज्ञानतावश हमं उससे द्वेष करते हैं तो

हे परमात्मन्! उसे हम आपकी न्याय-व्यवस्था पर छाड़ देते हैं। आप हमारा सम्यक् मार्गदर्शन कर, हमारी रक्षा करें।

अन्तर्दृगों से भगवान्! ऊपर भी दृष्टि आते।
ऋतु सिद्ध वृष्टि होती, सब सृष्टि को चलाते।
भौतिक विभूतियाँ हैं, तेरी प्रकट निशानी।
कैसे कहेगी वाणी, ऐसी अकथ कहानी।
हम बार-बार प्रभुवर! करते तुम्हें नमस्ते।
जो द्वेष हो परस्पर, वह तेरे न्याय हस्ते।।

।। उपस्थानमंत्राः ।।

प्रभु को अपने सब ओर व्यापक जानकर अपने को सर्व रक्षक सर्वशक्तिमान् प्रकाशस्वरूप प्रभु की पवित्र गोद में बैठा अनुभव करता हुआ निम्न मंत्रों का अर्थ चिन्तन करें–

ओम्, उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देव देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।।1।।

(यजु. 35/14)

भावार्थः-

हे प्रकाश स्वरूप देवाधिदेव परमात्मन्! आप ही समस्त संसार के अज्ञानान्धकार को समाप्त कर, प्रकाश व आनन्द के देने वाले हैं। आप ही चराचर जगत् के उत्पादक, पालक व संहारक हैं। हम आपकी ज्ञान रश्मियों का चारों और अनुभव कर, उन्नति पथ पर बढ़ते हुए, अत्यन्त श्रद्धा से आपको प्राप्त करें।

रवि रश्मि के रमैया, पावन प्रभा दिखा दो।
अज्ञान की तमिस्रा, भूलोक से मिटा दो।
देवों के देव दिन-दिन, हो दिव्य दृष्टि प्यारी।
श्रुति-गान को न भूले, रसना कभी हमारी।।

उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः।
दृशे विश्वाय सूर्यम्।।2।।

(यजु॰ 33/31)

भावार्थः-

हे जातवेदस् प्रभो! सृष्टि के समस्त पदार्थ, वेदादि शास्त्रों की ऋचायें, विद्वानों की ज्ञानमयी वाणियाँ, आपकी पूर्णता का सम्यक् प्रकार से दिग्दर्शन करा रही हैं। हम उसी ज्ञानमयी स्तुति का गान करते हुए, हे प्रभो! आपको प्राप्त करते हैं।

इन बाह्य चक्षुओं से, वह दृष्टि में न आया।
चाहा पता लगाना, उनका पता न पाया।
होकर निराश जब मैं, घर लौटा आ रहा था।
सृष्टि का जर्रा-जर्रा, प्रभु गान गा रहा था।
दर्शन प्रभु के करके जब मन मेरा न माना।
भरकर खुशी में उसने, गाया नया तराना।
जीवन में ज्योति, प्राणों में प्रेरणा तुम्हीं हो।
मन में मनन, बदन में, नव-चेतना तुम्हीं हो।

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः।
आ प्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्मा जगतस् -
तस्थुषश्च स्वाहा ।।3।। (यजु॰ 7/42)

भावार्थः-

हे प्रभो! आपकी उपासना उन्नति व समस्त बलों को प्रदान करने वाली है। आप ही सूर्य के समान हमारे मार्गदर्शक हैं। आप ही मित्र-वरुण और अग्नि हैं। आपने ही द्युलोक से पृथ्वी पर्यन्त लोक-लोकान्तर तथा जड़-चेतनादि जगत् को अपने नियमों से आबद्ध कर, यथा-योग्य पूर्णता प्रदान कर रही है। मैं इस सत्य को स्वीकार करता हुआ, मधुर वाणी से आपका बारम्बार गुणगान करता हूँ। कृपया मेरी प्रार्थना को स्वीकार करें।

अद्भुत स्वरूप तेरा, तेरी अनूप करनी।
है आप में अवस्थित, द्यौ अन्तरिक्ष धरणी।
तेरी कृपा से प्रभुवर! सच्चा प्रकाश पाया।
श्रद्धा की अंजलि ले, तेरे समीप आया।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ।।4।। (यजु. 36/24)

भावार्थः-

हे प्रभो! आप हम पर ऐसी कृपा करो, कि हम जीवन-पर्यन्त उगते हुए सूर्य का दर्शन करें। हम कम से कम सौ वर्ष तक प्राण-शक्ति को धारण कर, देखते-सुनते और बोलते हुए अखण्डित शक्ति वाले होकर, जीवन की समस्त क्रियाओं का कुशलता-पूर्वक सम्पदन करें। यदि आपकी अनुकम्पा से इससे भी अधिक आयु हो, तो वह आयु, सम्पूर्ण शक्ति तथा अदीन भाव से युक्त होवे, ऐसी कामना है।

जगदीश! यह विनय है, हम वीरवर कहावें।
होकर शतायु स्वामिन्! तुमसे लगन लगावें।
सौ साल तक हमारी, आँखें हो ज्योतिधारी।
कानों में शब्द सम्यक्, सुनने की शक्ति सारी।
वाणी विराट् प्रभु की, विरूदावली सुनावे।
परतन्त्रता है पातक, स्वातन्त्र्य मन्त्र गावे।
सौ वर्ष से अधिक भी जीवित रहें सुखारी।
सर्वांग की क्रियायें, स्थिर रहें हमारी।।

।। गायत्रीमन्त्रः।।

उपासक प्रभु से सुपथगामी बुद्धि की प्रार्थना करता हुए इस मन्त्र का जाप करें एवं परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करें–

ओम् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितु र्वरेण्यं, भर्गो देवस्य
धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

(यजु॰ 36/3)

भावार्थः-

हे सवितारूप देवाधिदेव परमात्मन्! आपसमस्त प्राणियों के जीवन के प्राणाधर, दुःख-विनाशक तथा आनन्द-प्रादाता हैं। हम आपके शुद्ध विज्ञान स्वरूप तेज को, जो सदा ग्रहण करने योग्य है, उसे भक्ति द्वारा अपनी आत्मा में धारण करते हैं। जिससे हमारी बुद्धि तथा उससे प्रेरित होने वाली शक्ति सदैव बुरे कार्यों से पृथक् रहकर, श्रेष्ठ कार्यों में प्रवृत्त रहे।

प्राण प्रदाता संकट त्राता, हे सुखदाता ओ३म् ओ३म्।
सविता माता पिता वरेण्यं, भगवान् भ्राता ओ३म् ओ३म्।
तेरा शुद्ध स्वरूप, करें हम धारण धाता ओ३म् ओ३म्।
प्रज्ञा प्रेरित कर सुकर्म में, विश्व विधाता ओ३म् ओ३म्।।

।। अथ समर्पण ।।

निम्नलिखित वाक्य से उपासक अहंकार की निवृत्ति के लिए किए गए सन्ध्योपासना रूप कर्म को श्रद्धा पूर्वक प्रभु चरणों में समर्पित करें—

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।।

भावार्थः-

हे करुणासागर ऐश्वर्यवान् परमात्मन्! आपकी कृपा से हम जप-उपासना आदि कर्मों को करते हुए धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र ही प्राप्त करें।

हे करुणासागर, दीनबन्धो! मैं द्वारा तुम्हारे आया हूँ।
अपनी झोली में श्रद्धा के, कुछ सुमन साथ में लाया हूँ।
धर्म-अर्थ अरु काम-मोक्ष की, सिद्धि मुझको दे दीजे।
कृपा करो हे कृपा के सागर! शरण में अपनी ले लीजे।।

।। अथ नमस्कारमन्त्रः ।।

इस मन्त्र से अपने उपास्य का ध्यान करते हुए स्वयं को उसके प्रति अर्पण कर मानसिक रूप से प्रभु को नमन करें—

ओम्, नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमःशंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।।

यजु. 16/41)

भावार्थः-

जो सुखस्वरूप, कल्याण का कर्त्ता है, जो समस्त सुखों को प्रदान कर धर्म-कार्यों में संयुक्त करता हुआ मोक्ष सुख को प्रदान करने वाला है, ऐसे शान्ति-सुख और आनन्ददायक परमात्मा को हम बारम्बार प्रणाम करते हैं।

हे मान्यवर महेश्वर! मंगल करो हमारा।
हे शान्तिरूप स्वामिन्! मन शान्त हो हमारा।
बहती रहे हृदय में, अविरल सुजान धारा।
फिर अन्त में पिताश्री, तुमको नमन करें हम।
वेदों के ज्ञान द्वारा जीवन सफल करें हम।।

ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

।। इति ब्रह्मयज्ञः ।।

।। प्रार्थना ।।

हे सर्वाधार, सर्वान्तर्यामिन् परमेश्वर! आप अनन्त काल से अपने उपकारों की वर्षा किये जाते हो। प्राणीमात्र की सम्पूर्ण कामनाओं को आप ही प्रतिक्षण पूर्ण करते हो। हमारे लिए जो कुछ शुभ तथा हितकर है, उसे बिना माँगे हमारी झोली में डालते जाते हो। आपके आँचल में अविचल शान्ति तथा आनन्द का वास है। आपकी चरण-शरण की शीतल छाया में परम तृप्ति है, शाश्वत सुखों की उपलब्धि है, तथा सब अभिलषित पदार्थों की प्राप्ति है।

हे जगत्पिता परमेश्वर! हममें सच्ची श्रद्धा तथा विश्वास हो। हम

आपकी अमृतमयी गोद में बैठने के अधिकारी बनें। अन्तः करण को मलिन बनाने वाली स्वार्थ तथा संकीर्णता की सब क्षुद्र भावनाओं से हम ऊँचे उठे। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि कुटिल भावनाओं तथा सब मलिन वासनाओं को हम दूर करें। अपने हृदय की आसुरी प्रवृत्तियों के साथ युद्ध में विजय पाने के लिए, हे प्रभो! हम आपको ही पुकारते हैं, और आपका ही आँचल पकड़ते हैं।

हे परम-पावन प्रभो! हममें सात्विक वृत्तियाँ जाग्रत हों। क्षमा, सरलता, स्थिरता, निर्भरता, अहंकार-शून्यता इत्यादि शुभ-भावनायें हमारी सम्पत्ति हों। हमारा शरीर स्वस्थ तथा परिपुष्ट हो, मन सूक्ष्म तथा उन्नत हो, आत्मा पवित्र तथा सुन्दर हो। सुन्दर हो। आपके सस्पर्श से हमारी सारी शक्तियाँ विकसित हों। हृदय दया तथा सहानुभूति से भरा हो। हमारी वाणी में मिठास तथा दृष्टि में प्यार हो। विद्या और ज्ञान से हम परिपूर्ण रहें। हमारा व्यक्तित्व महान् तथा विशाल हो।

हे प्रभो! अपने आशीर्वादों की वर्षा करो। दीनातिदीनों के मध्य में विचरण करने वाले प्रभो! आपके चरणारविन्दों में हमारा जीवन अर्पित हो। इसे अपनी सेवा में लेकर हमें कृतार्थ करो।

।। ओ३म् शान्तिः शान्ति शान्तिः ।।



।। अथ देवयज्ञः ।।

होम करने से पवन और वर्षा जल की शुद्धि करके शुद्धपवन और जल के योग से पृथिवी के सब पदार्थों की जो अत्यन्त उत्तमता होती है उससे सब जीवों को परम सुख होता है। इस कारण अग्निहोत्र कर्म करने वाले मनुष्यों को भी जीवों का उपकार करने से अत्यन्त सुख लाभ होता है तथा ईश्वर भी उन मनुष्यों पर प्रसन्न होता है, यज्ञ से पापों का निवारण एवं सुखों की प्राप्ति होती है। अग्निहोत्र से आरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़ के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अनुष्ठान पूरा होता है, इसलिए इसको देवयज्ञ कहते हैं।

(महर्षि के ग्रन्थों से)

* ।। अथ ऋत्विग्वरणम् ।।

यज्ञ कर्म करने के लिए धर्मात्मा, शास्त्रोक्त विधि को पूर्ण-रीति से जानने हारे, विद्वान, कुलीन वेदवित् सद्गृहस्थ ऋत्विक् अथवा पुरोहित का निम्न रुपेण वरण करें–

यजोमानोक्ति :– ओमावसोः सीदने सीद।

---

* ऋत्विजों के वरण के समय महर्षि दयानन्द ने सोने के कुण्डल, अंगूठी व रेशमी वस्त्रों को भेंट स्वरूप देने का विधनकिया है–ऋत्विग्वरणार्थं कुण्डलाङ्गुलीयकवासांसि।। संस्कारविधि ।।

अथर्ववेद में भी ऐसा ही विधान है–

यजमान का कथन-भगवान को साक्षी करते हुए मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि कर्म की समाप्ति पर्यन्त आप यज्ञ के आसन पर विराजिए।

ऋत्विगुक्तिः– ओमावसोः सीदने सीद।

ऋत्विक का स्वीकारोक्ति–प्रभु को स्मरण करते हुए मैं आसन ग्रहण करता हूं।

यजमानोक्तिः– अहमद्योक्त कर्मकरणाय भवन्तं वृणे।

यजमान ऋत्विक्/पुरोहित से कहे आज मैं अमुक कर्म की सम्पन्नता के लिए आपका वरण करता हूँ।

ऋत्विगुक्तिः–वृतोऽस्मि।[1]

स्वीकारोक्ति - मुझे स्वीकार है।

तदनन्तर यजमान एवं ऋत्विक् आदि शास्त्र निर्दिष्ट स्थान पर इस प्रकार बैठें–

अमोनं वासो दद्याद् हिरण्यमपि दक्षिणाम्।
तथा लोकान्त्समाप्नोति ये दिव्या ये च पार्थिवाः।।

(अथव. 6/5/14)

सार्वदेशिक धर्मार्य सभा द्वारा सम्पादित ''यज्ञ पद्धति प्रकाश'' (1987 का संस्करण) में स्पष्ट लिखा है–''पुरोहित का वरण जब तक यजमान न करे तब तक स्वयं आसन पर जाकर पुरोहित न बैठे। और विधि की सम्पन्नता के लिए वरण-क्रिया सब विशिष्टयज्ञों में अवश्य करावे। इसमें संकोच न करे क्योंकि वह पुरोहित वैदिक कर्मकाण्ड की मर्यादाओं का रक्षक है।'' लेकिन आर्यजनों के मध्य यह प्रक्रिया किन्हीं कारणों से विलुप्त हो रही हे, जिससें अनार्य संस्कारों को प्रश्रय प्राप्त हो रहा हैं आर्यजनों को चाहिए कि श्रद्धा व सामर्थ्य के अनुरूप वरण की प्रक्रिया अवश्य करें।

सम्पादक

यजमान — वेदी के पश्चिम में पूर्वाभिमुख या दक्षिणाभिमुख
होता — वेदी के पश्चिम में पूर्वाभिमुख
अध्वर्यु — वेदी के उत्तर में दक्षिणाभिमुख
उद्गाता — वेदी के पूर्व में पश्चिमाभिमुख
ब्रह्मा — वेदी के दक्षिण में उत्तराभिमुख

ऋत्विक् वरण के पश्चात् संकल्प पाठ आवश्य करें। संकल्प के लिए दाहिने हाथ की अंजलि बना उसमें जल भर कर निम्न रूपेण का पाठ करें–

* ।। अथ सङ्कल्पः ।।

ओम्, तत्सत् श्री ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्द्धे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे तत्र एकवृन्दसप्तनवति कोटिनवविंशतिलक्षैको नपंचा–शत्सहस्र पंचाधिकशततमेऽब्दे (1, 97, 29, 49, 105) सृष्टि संवत्सरे एकषष्ट्युत्तरे-द्विसहस्रतमे (2061) विक्रमाब्दे-एकाशीत्युत्तरशततमे (181) दयानन्दाब्दे चतुरधिकद्विसहस्रतमे (2004) खिष्टाब्दे प्रभवादिषष्टिसवंत्साराणां मध्ये..... नामसंवत्सरे.... ...... आयने........ ऋतौ मासानामुत्तमे .... मासे *सारे*

---

* महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेददिभाष्य भूमिका के वेदोत्पत्ति विषय में संकल्पोच्चारण की प्रथा को आर्यों के आदि सृष्टि के इतिहास से लेकर बोलते रहने को प्रशस्य बताया है तथा किसी भी प्रकार से इस व्यवस्था के भंग करने को अनुचित कहता है।

शुभे....... पक्षे .... वासरे .... तिथौ .... नक्षत्रे .... लग्ने .... मुहूर्त्ते जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्त्तान्तगति भारतवषे-........नद्याः तटे .... शुभस्थाने .... गोत्रोत्पन्नः ....नामाहं धर्मार्थकाममोक्षसिद्धये .... यज्ञकर्म करिष्ये।

।। अथेश्वर स्तुतिप्रार्थनोपासन मन्त्राः ।।

सब संस्कारों के आदि में निम्नलिखित मंत्रों का पाठ अर्थ द्वारा एक विद्वान् वा बुद्धिमान् पुरुष प्रार्थना और उपासना स्थिरचित होकर परमात्मा में ध्यान लगा के करे, और सब लोग उसमें ध्यान लगाकर सुनें और विचारें।

ओम्, विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव ।।1।। (यजु.. 30/3)

अर्थ – हे (सवितः) सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त (देव) शुद्धस्वरूप, सब दुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दुरितानि) दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को (परासुव) दूर कर दीजिये। और (यत्) जो (भद्रम्) कल्याणकारक गुण-कर्म-स्वाभाव और पदार्थ हैं। (तत्) वह सब हमको (आ सुव) प्राप्त कीजिये।

तू सर्वेश सकल सुखदाता, शुद्ध स्वरूप विधाता है।
उसके कष्ट नष्ट हो जाते, जो तेरे ढिंग आता है।
दुर्गुण-दुर्व्यसनों से, हमको नाथ बचा लीजे।
मंगलमय गुण-कर्म पदारथ, प्रेम सिन्धु हमको दीजे।।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।2।।

(यजु. 13/4)

अर्थ – जो (हिरण्यगर्भः) स्वप्रकाश स्वरूप और जिसने प्रकाश करने हारे सूर्य-चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो (भूतस्य) उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का (जातः) प्रसिद्ध (पतिः) स्वामी (एकः) एक ही चेतनस्वरूप (आसीत्) था, जो (अग्रे) सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व (समवर्तत) वर्तमान था, (सः) वह (इमाम्) इस (पृथिवीम्) भूमि (उत्) और (द्याम्) सूर्यादि को (दाधार) धारण कर रहा है हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) शुद्ध परमात्मा के लिए (हविषा) ग्रहण करने योग्य, योगाभ्यास और अतिप्रेम से (विधेम) विशेष भक्ति किया करें।

तू ही स्वयं प्रकाश सुचेतन, सुखस्वरूप शुभ त्राता है।
सूर्य-चन्द्र लोकादि को तू, रचता और टिकाता है।
पहले था, अब भी तू ही हे, घट-घट में व्यापक स्वामी।
योग-भक्ति-तप द्वारा तुझको, पावें हम अन्तर्यामी।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।3।। (यजु. 25/13)

अर्थ – (यः) जो (आत्मदा) आत्मज्ञान का दाता, (बलदा) शरीर-आत्मा और समाज के बल का देने हारा, (यस्य) जिसकी हारे

(विश्वे) सब (देवाः) विद्वान् लोग (उपासते) उपासना करते हैं, ओर (यस्य) जिसका (प्रशिषम्) प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन, न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं (यस्य) जिसका (छाया) आश्रय ही (अमृतम्) (मोक्ष) सुखदायक है (यस्य) जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही (मृत्युः) आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए (हविषा) आत्मा और अन्तःकरण से (विधेम) भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

तू ही आत्मज्ञान बलदाता, सुयश विज्ञजन गाते हैं।
तेरी चरण-शरण में आकर, भवसागर तर जाते हैं।
तुझको ही जपना जीवन है, मरण तुझे बिसराने में
मेरी सारी शक्ति लगे प्रभु, तुझसे लगन लगाने में।।

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव। य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।4।। (यजु. 23/3)

अर्थ – (यः) जो (प्राणतः) प्राण वाले और (निमिषतः) अप्राणिरूप (जगतः) जगत् का (महित्वा) अपनी अनन्त महिमा से (एक इत्) एक ही (राजा) विराजमान राजा (बभूव) है, (यः) जो (अस्य) इस (द्विपदः) मनुष्यादि और (चतुष्पदः) गौ आदि प्राणियों के शरीर की (ईशे) रचना करता है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) सकलैश्वर्य के देने

परमात्मा के लिए (हविषा) अपनी सकल उत्तम सामग्री से(विधेम) विशेष भक्ति करें।

तूने अपनी अनुपम माया से जग ज्योति जगाई है।
मनुज और पशुओं को रचकर, निज महिमा प्रकटाई है।
अपने हिय सिंहासन पर, श्रद्धा से तुझे बिठाते हैं।
भक्ति भाव से भेटें लेकर, तव चरणों में आते हैं।।

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्वः स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।5।। (यजु॰ 32/6)

अर्थ – (येन) जिस परमात्मा ने (उग्रा) तीक्ष्ण स्वभाव वाले (द्यौः) सूर्यादि (च) और (पृथिवीम्) भूमि को (दृढ़ा) धारण किया (येन) जिस जगदीश्वर ने (स्वः) सुख को (स्तभितम्) धारण किया, ओर (येन) जिस ईश्वर ने (नाकः) दुःख-रहित मोक्ष को धारण किया है (यः) जो (अन्तरिक्षे) आकाश में (रजसः) सब लोक-लोकान्तरों को (विमानः) विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते है; वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस (कस्मे) सुखदायक (देवाय) कामना करने योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए (हविषा) सब सामर्थ्य से (विधेम) विशेष भक्ति करें।

तारे-रवि-चन्द्रदिक रचकर, निज प्रकाश चमकाया है।
धारणी को धारण कर तूने, कौशल अलख लखाया है।

तू ही विश्व विधाता पोषक, तेरा ही हम ध्यान करें।
शुद्ध भाव से भगवान तेरे, भजनामृत का पान करें।।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।।6।। (ऋ. 10/121/10)

अर्थ – हे (प्रजापते) सब प्रजा के स्वामी परमात्मन्! (त्वत्) आपसे (अन्यः) भिन्न दूसरा कोई (ता) उन (एतानि) इन (विश्वा) सब (जातानि) उत्पन्न हुए जड़-चेतनादिकों को (न) नहीं (परिबभूव) तिरस्कार करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं (यत्कामाः) जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले होके, हम लोग भक्ति करें (ते) आपका (जुहुमः) आश्रय लेवें और वाञ्छा करें। (तत्) उस-उस की कामना (नः) हमारी सिद्ध (अस्तु) होवे, जिससे (वयम्) हम लोग (रयीणाम्) धनैश्वर्यों के (पतयः) स्वामी (स्याम) होवें।

तुझसे भिन्न न कोई जग में, सब में तू ही समाया है।
जड़-चेतन सब तेरी रचना, तुझमें आश्रय पाया है।
हे सर्वोपरि विभो! विश्व का, तूने साज सजाया है।
हेतु रहित अनुराग दीजिये, यही भक्त को भाया है।।

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।।7।। (यजु. 32/10)

अर्थ – हे मनुष्यों! (सः) वह परमात्मा (नः) अपने लोगों का (बन्धुः) भ्राता के समान सुखदायक (जनिता) सकल जगत् का उत्पादक (सः) वह (विधाता) सब कामों का पूर्ण करने हारा (विश्वा) सम्पूर्ण (भुवनानि) लोकमात्र (धामानि) नाम, स्थान, जन्मों को (वेद) जानता है, और (यत्र) जिस (तृतीये) संसारिक सुख-दुख से रहित नित्यानन्दयुक्त (धामन्) मोक्ष स्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में (अमृतम्) मोक्ष को (आनशानाः) प्राप्त होके (देवाः) विद्वान् लोग (अध्यैरयन्त) स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। अपने लोग मिलके सदा उसकी भक्ति किया करें।

तू गुरु है, प्रजेश भी तू है, पाप-पुण्य फल दाता है
तू ही सखा-बन्धु मम तू ही, तुझसे ही सब नाता है।
भक्तों को इस भव-ब'न्धन से, तू ही मुक्त कराता है।
तू ही अज-अद्वैत महाप्रभु, सर्वकाल का ज्ञाता है।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम।।8।।

(यजु. 40/16)

अर्थ – हे (अग्ने) स्वप्रकाश, ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करने हारे (देव) सकल सुखदाता परमेश्वर आप जिससे (विद्वान्) सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा करके (अस्मान्) हम लोगों को (राये) विज्ञान व राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए (सुपथा) अच्छे धर्म युक्त आप्त लोगों के मार्ग से (विश्वानि) सम्पूर्ण (वयुनानि) प्रज्ञान और उत्तम कर्म (नय) प्राप्त कराइये, और (अस्मत्) हमसे (जुहुराणम्) कुटिलता युक्त (एनः) पापरूप कर्म को (युयोधि) दूर कीजिये। इस कारण हम लोग (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) बहुत प्रकार की स्तुतिरूप

(नम उक्तिम्) नम्रतापूर्वक प्रशंसा (विधेम) सदा किया करें, और सर्वदा आनन्द में रहें।

तू है स्वयं प्रकाशरूप प्रभु, सबका सिरजनहारा तू ही।
रसना निशदिन रटे तुम्हीं को, मन में बसना सदा तुम्हीं।
अघ-अनर्थ से हमें बचाते, रहना हरदम दयानिधान।
अपने भक्त जनों को भगवान्! दीजे यही विशद वरदान।।

।। इति ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनामन्त्राः ।।



।। अथ स्वस्तिवाचनम् ।।

ओम्, अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम् ।।1।।

स नः पितेव सूनेवऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये ।।2।।

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्णवः। स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ।।3।।

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ।।4।।

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये। देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ।।5।।

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति। स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ।।6।।

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि ।।7।। (ऋ. 5/11/11-15)

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः। ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।।8।। (ऋ. 7/35/15)

येभ्यो माता मधुमत् पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये।।6।।

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद् देवासो अमृतत्वमानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ।।10।।

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्। ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ आदितिं स्वस्तये।।11।।

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन। को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये।।12।।

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः। त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये।।13।।

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः। ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ।।14।।

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्नि मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ।।15।।

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्। दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ।।16।।

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः। सत्यया वो देवहूत्या हुवेम श्रृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ।।17।।

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः। आरे देवा द्वेषो अस्मद् युयोतनोरुणः शर्म यच्छता स्वस्तये ।।18।।

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि। यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ।।19।।

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ।।20।।

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्य१प्सु वृजने स्वर्वति। स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ।।21।।

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति। सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा।।22।। (ऋ॰ 10/63/3-16)

इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशꣳसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि।23।। (यजु. 1/1)

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद् वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे।।24।।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्तताम्। देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे।।25।।

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।26।।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पति-र्दधातु।।27।।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।28।। (यजु॰ 25/14,15,18,19,21)

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि।।28।।

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने।।29।। (साम॰ पू॰ 1/1/1.2)

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः। वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ।। 30।।

(अथर्व॰ 1/1/1)

।। इति स्वस्तिवाचनम् ।।



।। अथ शान्तिकरणम् ।।

ओम्, शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ।।1।।

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ।।2।।

शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु।।3।।

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ।।4।।

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु। शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः।।5।।

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः। शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु।।6।।

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः। शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्व १ : शम्वस्तु वेदिः।।7।।

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु। शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः।।8।।

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः।।9।।

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः। शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ।।10।।

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु। शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ।।11।।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः। शं नः ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु।।12।।

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्य१ः शं समुद्रः। शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा।।13।। (ऋ॰ 7/35/1-13)

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।।14।।

शं नो वातः पवता७ँ शं नस्तपतु सूर्यः।
शं नः कनिक्रदद् देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु।।15।।

अहानि शं भवन्तु नः शꣳ रात्रीः प्रति धीयताम्। शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः ।।16।।

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शं योरभि स्रवन्तु नः ।।17।।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।18।।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ श्रृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।।19।। (जयु. 36/8,10,11,12,17,24)

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ।।20।।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।21।।

यत् प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः

शिवसंकल्पमस्तु । ।22 । ।

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु । ।23 । ।

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः। यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु । ।24 । ।

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिव-संकल्पमस्तु । ।25 । । (यजु॰ 34/1-6)

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः । ।26 । (सा.उ. 1/1/13)

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु । ।27 । ।

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु । ।28 । । (अथ॰ 19/15/5,6)

। । इति शान्तिकरणम् । ।

।। अथ अग्निहोत्र विधिः ।।

आचमन क्रिया – दाहिने हाथ की अंजलि में जल भरकर हथेली के मूल में (कलाई के पास) होठ लगाकर आचमन करें। पानी पीते समय किसी भी प्रकार का शब्द नहीं होना चाहिए।

अग्निहोत्र आरम्भ करने से पूर्व निम्न मंत्रों के अर्थ विचार पूर्वक तीन आचमन करें–

।। आचमन-मन्त्राः ।।

ओम्, अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।। इससे पहला आचमन।

भावार्थ–हे अविनाशी प्रभो! आप जगत् में प्राणीमात्र के बिछौने अर्थात् आश्रय एवं आधार हैं। यह मैं सत्यतापूर्वक अच्छी प्रकार जानता हूं।

ओम्, अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।। इससे दूसरा आचमन।

भावार्थ–हे अखण्ड एकरस प्रभो! आप ओढ़ने योग्य वस्त्र की भांति सर्वरक्षक हैं यह मैं विश्वास पूर्वक जानता हूं।

ओम्, सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ।।

इससे तीसरा आचमन करें। (तैति. आ. 10/32/35)

भावार्थ–हे प्रभो! सत्य, यश एवं श्रीः मुझमें आश्रित होकर रहें।

निम्न मंत्रों से अर्थ विचार पूर्वक अपने अंगों के दोषों को दूर करने की प्रभु से प्रार्थना करते हुए वाम हस्त में तनिक जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुलियों को मिलाकर उनसे उस जल को दायीं ओर से बायीं ओर निर्देशानुसार स्पर्श करें–

।। अङ्गर्स्पश-मन्त्राः ।।

ओम्, वाङ्म आस्येऽस्तु ।।1 ।। (मुख का स्पर्श करें)

भावार्थ–हे प्रभो! मेरे मुख में वाक्-शक्ति सामर्थ्यशाली होवे।

ओम्, नसोर्मे प्राणोऽस्तु ।।2 ।। (दोनों नथनों का स्पर्श करें)

भावार्थ–हे प्रभो! मेरी नासिका के दोनों भागों में प्राण शक्ति बनी रहे।

ओम्, अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ।।3 ।। (दोनों आंखों का स्पर्श करें।)

भावार्थ–हे प्रभो! मेरी दोनों आंखों में दर्शन शक्ति हो।

ओम्, कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ।।4 ।।(दोनों कानों का स्पर्श करें)

भावार्थ–हे प्रभो! मेरे दोनों कानों में श्रवण शक्ति हो।

ओम्, बाह्वोर्मे बलमस्तु ।।5 ।। (दोनों भुजाओं का स्पर्श करें)

भावार्थ–हे प्रभो! मेरी दोनों भुजाओं में बल हो।

ओम्, ऊर्वोर्म ओजोऽस्तु ।।6 ।। (दोनों जांघों का स्पर्श करें)

भावार्थ–हे प्रभो! मेरी दोनों जंघाओं में भार वहन करने तथा चलने का सामर्थ्य बना रहे।

ओम्, अरिष्टानि मेऽअंगानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ।।7 ।।

(सारे शरीर पर जल छिड़कें) (पार. गृ. 2/3/25)

भावार्थ–हे प्रभो! मेरा शरीर एवं शरीर के साथ सभी अंग-अवयव रोग रहित एवं शक्ति सम्पन्न हो।

।। अग्न्याधान-प्रकरण ।।

।। अग्नि-ज्वालन मन्त्रः ।।

निम्न मंत्र से दीपक प्रज्ज्वलित करें–

ओम्, भूर्भुवः स्वः ।। (गोभिलगृ. 1/1/1)

तत्पश्चात् दीपक से कपूर जला किसी पात्र में छोटी-छोटी समिधा रख अच्छी प्रकार अग्नि प्रज्ज्वलित करें।

।। अग्निस्थापना मंत्रः ।।

पूर्व प्रज्ज्वलित अग्नि को निम्न मंत्र से कुण्ड में स्थापित करें। यह कार्य मंत्र के 'आदधे' पद के उच्चारण के साथ करना चाहिए–

ओम्, भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवी देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नाद-मन्नाद्यायादधे ।। (यजु. अ. 3/मं. 5)

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्नि को धर उस पर छोटे-छोटे काष्ठ और थोड़ा कपूर धर, अगला मन्त्र पढ़ के व्यजन से अग्नि को प्रदीप्त करें।

।। अग्निप्रदीप्त करने का मंत्र ।।

ओम्, उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सः सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत। (यजु. 15/54)

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे तब चन्दन की अथवा पलाशादि की तीन-तीन समिधा आठ-आठ अंगुल की घृत में डूबो उनमें से एक-एक समिधा को नीचे लिखे मंत्रों से अग्नि में चढ़ावें। वे मंत्र ये हैं–

।। समिदाधान के मंत्र ।।

ओम्, अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसे-नान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे। इदं न मम।। (आ. गृ. 1/10/12)

इस मन्त्र से प्रथम समिधा का यज्ञकुण्ड में स्थापन करें।

ओम्, समिधाग्निं दुवस्य घृतैर्बोधयतातिथिम्। अस्मिन् हव्या जुहोतन ।।1।।

सुसमिद्धाय शोचिषे घृत तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे। इदं न मम।।2।।

(यजु. 3/1, 2)

इन दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा का यज्ञकुण्ड में स्थापन करें।

ओम्, तं त्वा समिद्धिरिङ्गरो। घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा। इदमग्नयेऽङ्गिरसे। इदं न मम।। (यजु. 3/3)

इस मन्त्र से तीसरी समिधा का यज्ञकुण्ड में स्थापन करें।

इन मंत्रों से समिदाधान करके नीचे इस एक मन्त्र को ही पांच बार बोल कर पांच बार घृत की आहुति देनी चाहिए–

।। पंच-घृता-हुति मंत्रः ।।

ओम्, अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभि-र्ब्रह्मवर्चसे-नान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे। इदं न मम।।1।।

(आश्व. गृह्य. 1/10/12)

।। जल सिंचनमन्त्राः ।।

तत्पश्चात् निम्न मंत्रों से अग्नि कुण्ड के चारों ओर क्रमशः पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण में जल सिंचन करें–

ओम्, अदितेऽनुमन्यस्व।

इस मन्त्र से वेदी के पूर्व दिशा में दक्षिण से उत्तर की ओर जल सिंचन करें।

ओम्, अनुमतेऽनुमन्यस्व।

इससे पश्चिम दिशा में दक्षिण से उत्तर की ओर

ओम्, सरस्वत्यनुमन्यस्व। (गोभिल गृ. प्र. 1 खं. 3 सू. 1-3)

इससे उत्तर दिशा में पश्चिम से पूर्व की ओर

ओम्, देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ।। (यजु॰ अ॰ 30 मं. 1)

इस मंत्र से पूर्व-दक्षिण कोण से जल सिंचन प्रारम्भ करके पूर्व-उत्तर कोण तक वेदी के चारों ओर जल सिंचन करें।

निम्न मन्त्रों से घृत की आहुति देवे–

।। आघारावाज्यभागाहुति मंत्राः ।।

ओम्, अग्नये स्वाहा। इदमग्नये। इदं न मम।।

इस मंत्र से वेदी में उत्तर भाग में प्रज्ज्वलित समिधा पर घृत की आहुति दें।

ओम् सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय। इदं न मम।।

(गो. गृ. प्र. 1 खं 8 सू. 2-3)

इस मन्त्र से वेदी में दक्षिण भाग में प्रज्ज्वलित समिधा पर आहुति देनी, तत्पश्चात्

।। आज्यभागाहुतिमन्त्रा ।।

ओम्, प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये। इदं न मम।
ओम्, इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय। इदं न मम।

(गो. गृ. 184-5)

इन दो मंत्रों से वेदी के मध्य प्रज्ज्वलित अग्नि में दो घृताहुति दें।

।। प्रातःकालीन प्रधान होम।।

निम्न मन्त्रों से घृत और सामग्री, दोनों की आहुतियाँ प्रदान करें–

ओम्, सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।।

ओम्, सूयो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।।

ओम्, ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।।

ओम्, सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा।। (यजु. 3/9, 10)

ओम्, भूरग्नये प्राणाय स्वाहा।

इदमग्नये प्राणाय। इदं न मम।

ओम्, भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा।

इदं वायवेऽपानय। इदं न मम।

ओम्, स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा।

इदमादित्याय व्यानाय। इदं न मम।

ओम्, भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः। इदं न मम।

ओम्, आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा।।

ओम्, यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।। (यजु. 32/14)

ओम्, विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा।। (यजु. 30/3)

ओम्, अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम स्वाहा। (यजु. 40/16)

।। सायंकालीन प्रधान होम ।।

।।आघारावाज्यभागाहुति मंत्राः ।।

निम्न मंत्रों से क्रमशः कुण्ड के उत्तर भाग व दक्षिण भाग में घृताहुति दें–

ओम, अग्नये स्वाहा। इदमग्नये। इदं न मम।
ओम्, सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय। इदं न मम।

(गो. गृ. प्र.1ख. 8 सू0 2-3)

।। आज्यभागाहुति मंत्राः ।।

निम्न मंत्रो से कुण्ड के मध्य भाग में घृताहुति दें–

ओम्, प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये। इदं न मम।।
ओम्, इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय। इदं न मम।।

(गो. गृ. प्र. 1 खं 8 सू. 4-5)

।। सायं कालीन आहुति के मंत्र।।

निम्न मन्त्रों से घृत और सामग्री दोनों की आहुतियाँ प्रदान करें

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा।।
ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।।
ओम् (अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः) स्वाहा।।
मौन्

इस मन्त्र की आहुति मौन हो करके देना चाहिये।

ओम्, सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा।। (यजु॰ 3/9, 10)

ओम, भूरग्नये प्राणाय स्वाहा।

इदमग्नये प्राणाय। इदं न मम।।

ओम्, भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा।

इदं वायवेऽपानाय। इदं न मम।।

ओम्, स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा।

इदमादित्याय व्यानाय। इदं न मम।।

ओम्, भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः। इदं न मम।।

ओम्, आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा।।

ओम्, यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।

तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।

(यजु॰ 32/14)

ओम्, विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।

यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा।। (यजु॰ 30/3)

ओम्, अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम स्वाहा।। (यजु॰ 40/16)

यदि किसी विशेष प्रयोजन से हवन किया जा रहा हो तो तत्संबद्ध मंत्रों की यहाँ आहुतियाँ देने के पश्चात् पूर्णाहुति करें। और यदि दैनिक यज्ञ ही करना अभीष्ट हो तो यहाँ तीन बार गायत्री मंत्र की आहुति देकर **"ओम् सर्वं वै पूर्णं स्वाहा"** मंत्र से तीन बार पूर्णाहुति देकर दैनिक यज्ञ सम्पन्न करें।

।। इति दैनिक अग्निहोत्रविधिः ।।

।। बृहद् यज्ञ - मन्त्राः ।।

दैनिक यज्ञ के पश्चात् निम्न मंत्रों से घृत की आहुति देवें—

।। आघारावाज्यभागाहुति मंत्राः ।।

निम्न मंत्रों से क्रमशः कुण्ड के उत्तर भाग व दक्षिण भाग में घृताहुति दें।—

ओम्, अग्नये स्वाहा। इदमग्नये। इदं न मम।।

ओम्, सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय। इदं न मम।।

।। आज्यभागाहुति मंत्राः ।।

निम्न दोनों मन्त्रों से यज्ञकुण्ड के मध्य में घृत की आहुति प्रदान करें—

ओम् प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये। इदं न मम।।

ओम्, इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय। इदं न मम।।

।। व्याहृत्याहुतिमन्त्राः ।।

ओम्, भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये। इदं न मम।।

ओम्, भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे। इदं न मम।।

ओम्, स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय। इदं न मम।
ओम्, भुभुर्वः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः। इदं न मम।।

ये चार घी की आहुतियां देकर स्विष्टकृत् होमाहुति एक ही दें; यह घृत अथवा पुरोडाश आदि द्रव्य की देनी चाहिए; उसका मंत्र–

।। स्विष्टकृदाहुतिमंत्रः ।।

ओम्, यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते। इदं न मम।। (शतपथ का. 14/9/4/24)

इससे एक आहुति करके प्राजापत्याहुति (आगे वाले) मन्त्र को मन में बोल के देनी चाहिए।

।। प्राजापत्याहुतिमन्त्रः ।।

ओम्, (प्रजापतये) स्वाहा। इदं प्रजापतये। इदं न मम।।
मौन

इससे मौन करके एक आहुति देकर चार आज्याहुति घृत की देवें।

।। पवमानाज्याहुतिमन्त्राः ।।

निम्न मन्त्रों से चार घृताहुति देवें–

ओम्, भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूँषि पवस आ

सुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय । इदं न मम।। 1।।

ओम्, भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वहा। इदमग्नये पवमानाय। इदं न मम।। 2।।

ओम्, भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय। इदं न मम।। 3।। (ऋ.ग्. 9/66/19-21)

ओम्, प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा। इदं प्रजापतये। इदं न मम।

इनसे घृत की चार आहुति करके अष्टाज्याहुति के निम्नलिखित मंत्रों से सर्वत्र मंगल-कार्यों में आठ आहुति घृत एवं सामग्री की देवें वे आठ आहुतिमन्त्र ये हैं -

।। अष्टाज्याहुति मंत्राः।।

ओम्, त्वं नो अग्ने वरुण्स्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्याम्। इदं न मम।। 1।।

ओम्, स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्याम्।

इदं न मम।। 2।। (ऋ. 4/1/4,5)

ओम्, इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय। त्वामवस्युरा चके स्वाहा। इदं वरुणाय। इदं न मम।। 3।।

(ऋ. 1/25/19)

ओम्, तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा। इदं वरुणाय। इदं न मम।। 4।। (ऋ. 1/24/11)

ओम्, ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः। इदं न मम।। 5।। (हिरण्यकेशीय गृ. 13/1/26)

ओम्, अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित् त्वमयाऽअसि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजँ स्वाहा। इदमग्नये अयसे। इदं न मम।। 6।।

(कात्या. 15/1/11)

ओम्, उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च। इदं न मम ।। 7।। (ऋ. 1/24/15)

ओम्, भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञँ हिँ सिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवो भवतमद्य नः

स्वाहा। इदं जातवेदोभ्याम्। इदं न मम।। 8।। (यजु. 5/3)

इन आहुतियों के पश्चात् विशिष्ट आयोजन अथवा पर्व आदि से सम्बद्ध मंत्रों की आहुतियां देवें। तदन्तर गायत्री मंत्र से तीन बार आहुति देवें।

। गायत्री मंत्रः।।

ओम्, भूर्भुवः स्वः। तत्सवितु र्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

तदन्तर घृत अथवा पुरोडाश आदि द्रव्य से एक प्रायश्चित्त आहुति दें—

।। प्रायश्चित्ताहुतिमंत्रः।।

ओम्, यदस्यकर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते। इदं न मम।। (शतपथ का. 14/9/4/24)

इससे एक आहुति करके प्राजापत्याहुति (आगे वाले) मंन्त्र को मन में बोल के देनी चाहिए।

।। प्राजापत्याहुतिमन्त्रः।।

ओम्, (प्रजापतये) स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम।।
मौन

इसके पश्चात् निम्न पूर्णाहुति मंत्र के उच्चारण सहित तीन बार पूर्णाहुति देकरं यज्ञ सम्पन्न करें।

।। पूर्णाहुति मंत्रः।।

ओम्, सर्वं वै पूर्णं स्वाहा।।

।। इति बृहद् अग्निहोत्रविधिः।।

यज्ञोपरान्त वैदिक प्रार्थना

यज्ञ की विधि समाप्त करने के बाद घृत-पात्र में से थोड़ा सा घृत हथेली पर लगावें तथा यज्ञाग्नि पर हल्का सा सेक लेकर मुखादि शरीर के अंगों का स्पर्श करें तथा निम्न मन्त्रों के द्वारा परमात्मा के बल-तेज आदि गुणों की प्राप्ति के लिए प्रार्थना करें–

ओम्, तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाह्यायुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि वर्च्चोदाऽअग्नेऽसि वर्च्चो मे देहि। अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण।। 1।। (यजु. 3/17)

ओम्, मेधां मे देवः सविता आ ददातु।
ओम्, मेधां मे देवी सरस्वती आ ददातु।
ओम्, मेधां मे अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ।।2।।
ओम्, यत्तेऽग्ने तेजस्तेनाऽहं तेजस्वी भूयासम्।
ओम्, यत्तेऽग्ने वर्चस्तेनाऽहं वर्चस्वी भूयासम्।
ओम्, यत्तेऽग्ने हरस्तेनाऽहं हरस्वी भूयासम्।।3।।
ओम्, तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।

ओम्, वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।

ओम्, बलमसि बलं मयि धेहि।

ओम्, ओजोऽसि ओजो मयि धेहि।

ओम्, मन्युरसि मन्युं मयि धेहि।

ओम्, सहोऽसि सहो मयि धेहि।।4।।

पद्यार्थ

हे तेजवन्त भगवन! मेरे में तेज भर दो।
ब्रह्मण्ड वीर्य मुझको, भी वीर्यमान कर दो।
बल-वीर्य के विधायक, मुझको बली बनाओ।
हे ओज के अधीश्वर! निज ओज से सजाओं।
पुरुषत्व, रोष पावन, सहने की शक्ति दीजे।
अपने सभी गुणों से परिपूर्ण नाथ कीजे।

अथ पितृयज्ञः

अग्निहोत्र के पश्चात् पितृयज्ञ अर्थात् जीते माता, पिता, आचार्य, गुरु, उपाध्याय आदि मान्यों की श्रद्धापूर्वक आज्ञापालन आदि करके यथावत् सेवा करना तथा अन्न-पान एवं वस्त्रादि देकर उन्हें सन्तुष्ट व तृप्त करना पितृयज्ञ कहलाता है।

।। इति पितृयज्ञः ।।

अथ भूतयज्ञः (बलिवैश्वदेवयज्ञः)

निम्नलिखित दस मंत्रों से घृत-मिश्रित भात की, यदि भात न बना हो तो क्षार और लवणान्न को छोड़कर पाकशाला में जो कुछ भोजन बंना हो, उसी की आहुति करें—

ओम् अग्नये स्वाहा। ओम्, सोमाय स्वाहा। ओम्, अग्नीषोमाभ्याम् स्वाहा। ओम्, विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा। ओम्, धन्वन्तरये स्वाहा। ओम्, कुह्वै स्वाहा। ओम् अनुमत्यै स्वाहा। ओम्, प्रजापतये स्वाहा। ओम्, द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा। ओम्, स्विष्टकृते स्वाहा।

तत्पश्चात् निम्नलिखित मंत्रों से बलिदान करें। एक पत्तल वा थाली में यथोक्त दिशाओं में भाग रखना। यदि भाग रखने के समय कोई अतिथि आ जाय तो उसी को देना, अथवा अग्नि में डालना चाहिए—

।। भाग रखने के मंत्र ।।

ओम्, सानुगायेन्द्राय नमः।। (इससे पूर्व)।।

ओम्, सानुगाय यमाय नमः।। (इससे दक्षिण)।।

ओम्, सानुगाय वरुणाय नमः।। (इससे पश्चिम)।।

ओम्, सानुगाय सोमाय नमः।। (इससे उत्तर)।।

ओम्, मरुद्भ्यो नमः।। (इससे द्वार)।।

ओम्, अद्भ्यो नमः।। (इससे जल)।।

ओम्, वनस्पतिभ्यो नमः।। (इससे मूसलोखल)।।

ओम्, श्रियै नमः।। (इससे ईशान)।।

ओम्, भद्रकाल्यै नमः।। (इससे नैऋत्य)।।

ओम्, ब्रह्मणे नमः।। ओम्, वास्तुपतये नमः।। (इससे मध्य)। ओम्, विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः।। ओम्, दिवाचरेभ्यो भूतेभ्यो नमः।। ओम्, नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यो

नमः।। (इससे ऊपर)। **ओम्, सर्वात्मभूतये नमः।।** (इससे पृष्ठ)। **ओम्, पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः।।** (इससे दक्षिण)।। (मनु. 2/57-91)

तत्पश्चात् घृत सहित लवणान्न लेके

शुनां च पतिनानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।

वायसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद् भुवि।।

(मनु. अ. 3/श्लोक 91)

अर्थ-कुत्ते, पतित, चाण्डाल, पापरोगी, काक और कृमि ये छः भाग पृथिवी में धर, जिस-जिस नाम के हो उस-उस को खिला देवे।।

।। इति बलिवैश्वदेवविधिः।।

।। अतिथियज्ञः।।

तद्यस्यैवं विद्वान्व्रात्योऽतिथिर्गृहानागच्छेत्।।1।।

स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद्-व्रात्य क्वऽवात्सी व्रात्योदकं व्रात्य तर्पयन्तु व्रात्य यथा ते प्रियं तथास्तु। व्रात्य यथा ते वशस्तथास्तु। व्रात्य यथा ते निकामस्तथास्त्विति।।2।।

(अथर्व. का 15 सू. 11/-2)

जब पूर्ण विद्वान् परोपकारी सत्योपदेशक, गृहस्थों के घर आवें, तब गृहस्थ लोग स्वयं समीप जाकर उक्त विद्वानों को प्रणाम आदि करके उत्तम आसन पर बैठाकर पूछें कि कल के दिन कहाँ आपने निवास किया था? हे ब्रह्मन्! जलादि पदार्थ जो आपको अपेक्षित हों ग्रहण कीजिए और लोगों को अपने सत्योपदेश से तृप्त कीजिए।

स्थालीपाक=मोहन भोग, मीठा भात, खीर, बिना नमक की

जो धार्मिक, परोपकारी, सत्योपदेशक, पक्षपातरहित, शान्त सर्वहितकारक विद्वानों की अन्नादि से सेवा एवं उनसे प्रश्नोत्तर आदि करके विद्या प्राप्त करना अतिथियज्ञ कहाता है, उसको नित्यप्रति किया करें।

इन पंचमहायज्ञों को स्त्री और पुरुष दोनों प्रतिदिन किया करें।

।।दर्शेष्टि-अमावस्या यज्ञ।।

विशेष - कृष्ण पक्ष की रात्रियों के आरम्भ में चन्द्रमा का सम्बन्ध नहीं होता और अमावस्या की रात्रि में चन्द्रमा का सर्वथा अभाव होता है, अतः उस रात्रि के देव विद्युत और अग्नि हैं।

दर्शेष्टि मनुष्य को एक सुन्दर एवम् दिव्य सन्देश देता है। अमावस्या की रात्रि में चन्द्रमा नहीं होता। सर्वत्र अन्धकार ही अन्धकार का साम्राज्य होता है। परन्तु यह चन्द्रमा सदा लुप्त नहीं रहता। अन्धकार समाप्त होता है। धीरे-धीरे चन्द्रमा अपनी कलाओं के साथ उदित होना आरम्भ होता हैं और पूर्ण प्रभाओं के साथ चमकने लगता है। ठीक इसी प्रकार कभी-कभी मनुष्य के जीवन में भी अन्धकारमयी रात्रि का अवलोकन कर लिया कर। जैसे अमावस्या का तम=अन्ध कार दूर होकर चन्द्रमा अपनी चन्द्रिका के साथ छिटकने लगता है चहुँ ओर प्रकाश हो जाता है उसी प्रकार हे मानव! तू उठ पुरुषार्थ कर। तेरे जीवन की निशा भी समाप्त होकर उसमें उषा की ज्योति जगमगायेगी। निराशा और हताशा के घनघोर बादल दूर होकर आशा और उल्लास की किरणें चमकेंगी।

अमावस्या के दिन नैत्यिक अग्निहोत्र की आहुति देने पश्चात्

खिचड़ी, मोदक आदि बनाके निम्नलिखित मन्त्रों से विशेष आहुति करें।

।।अमावस्या की आहुतियां।।

ओम्, अग्नये स्वाहा।।1।।

ओम्, इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा।।2।।

ओम्, विष्णवे स्वाहा।।3।।

ओम्, भूरगनयेस्वाहा। इदमग्नये। इदन्न मम।।1।।

ओम्, भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे। इदन्न मम।।2।।

ओम्, स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय। इदन्न मम।।3।।

ओम्, भूभुर्वः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः। इदन्न मम।।4।।

ओम्, यत् ते देवा अकृण्वन् भागधेयममावास्ये संवसन्तो महित्वा। तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम् स्वाहा।।1।।

ओम्, अहमेवास्म्यमावास्यामामावसन्ति सुकृतो मयीमे। मयि देवा उभये साध्याश्चेन्द्रज्येष्ठाः समगच्छन्त सर्वे स्वाहा।।2।।

ओम्, आगन् रात्री संगमनी वसूनामूर्ज पुष्टं वस्वावेशयन्ती। अमावास्यायै हविषा विधेमोर्जं दुहाना पयसा म आगन् स्वाहा।।3।।

ओम्, अमावास्ये न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रुपाणि परिभूर्जजान। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा।।4।। (अथर्व. 7/79/1-4)

।। पौर्णमासेष्टि-पौर्णमासी यज्ञ।।

विशेष—पौर्णमासेष्टि भी मनुष्य को एक दिव्य प्रेरणा प्रदान करता है। जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण भी आते हैं जब मुनष्य के अपने वैभव, धन सम्पत्ति विद्या, बुद्धि बल आदि का अभिमान हो जाता है। ऐसे अभिमान के पुतलों को पूर्णिमा के दिन अपनी सम्पूर्ण कलाओं से चमकता हुआ चन्द्रमा यह सन्देश देता है कि हे-मानव! अपने जीवन में कभी किसी बात पर गर्व मत करना। जैसे पूर्णिमा का चन्द्रमा क्षय को प्राप्त होकर अमावस्या की रात्रि में सर्वथा विलीन हो जाता है, उसी प्रकार संसार के वैभव, धन, सम्पत्ति विद्या और बुद्धि जिन पर तू अभिमान कर रहा है इनका नाश भी अवश्यम्भावी है।

।। पौर्णमासी की आहुतियाँ।।

ओम्, अग्नये स्वाहा।।1।।

ओम्, इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा।।2।।

ओम्, विष्णवे स्वाहा।।3।।

ओम्, भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये। इदन्नमम।।1।।

ओम्, भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे। इदन्न मम।।2।।

ओम्, स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय। इदन्न

मम।।3।।

ओम्, भुभुर्वः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः। इदन्न मम।।4।।

ओम्, पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तादुन्मध्यतः पौर्णमासी जिगाय। तस्यां देवैः संवसन्तो महित्वा नाकस्य पृष्ठे समिषा मदेम स्वाहा।।1।।

ओम्, वृषभं वाजिनं वयं पौर्णमासं यजामहे स नो ददात्वक्षितां रयिमनुपद-स्वतीम् स्वाहा।।2।।

ओम्, प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रुपाणि परिभूर्जजान यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा।।3।।

ओम्, पौर्णमासी प्रथमा यज्ञियासीदह्ना
रात्रीणामतिशर्वरीषु। ये त्वां यज्ञै र्यज्ञिये अर्धयन्त्यमी ते
नाके सुकृतः प्रविष्टाः स्वाहा।।4।। (अथर्व॰ वेद 7/80/1-4)।।



जन्मदिवस के विशेष मन्त्र।।

ओम्, उपप्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतिवृधम्। अगन्म बिभ्रतो नमो दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा।।1।।(अथर्व. 7/32/1)

ओम्, शतंजीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु वसन्तान्। शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिश्शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः स्वाहा।।2।। (यजु. 10/161/4)

ओम्, सं मा सिञ्चन्तु मरुतः सं पूषा सं बृहस्पतिः सं मायमग्निः। सिञ्चन्तु प्रजया च धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे स्वाहा।।3।। (अथर्व. 7/33/1)

ओम्, तनूस्तन्वा मे सहे दत्तः सर्वमायुरशीय। स्योनं मे सीद पुरुः पृणस्व पवमानः स्वर्गे स्वाहा।।4।। (अथर्व. 9/61/1)

ओम्, जीवास्थ जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् स्वाहा।।5।।

ओम्, उपजीवा स्थोपजीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् स्वाहा।।6।।

ओम्, सञ्जीवा स्थ सं जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् स्वाहा।।7।।

ओम्, जीवला स्था जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् स्वाहा।।8।। (अथर्व. 19/69/1-4)ओम्, इन्द्रजीव सूर्य जीव देवा जीवा जीव्यासमहम्। सर्वमायुर्जीव्यासम् स्वाहा।।9।।(अथर्व. 19/70/1)

ओम्, आयुषायुः कृतां जीवायुष्मान् जीव मा मृथाः। प्राणेनात्मन्वतां जीव मा मृत्योरुद्गा वशम् स्वाहा।।10।।

(अथर्व. 19/27/8)

ओम्, सत्यामाशिषं कृणुता वयोधैः कीरिं चिद्धयवथ स्वेभिरेवैः। पश्चा मृधो-अप भवन्तु विश्वास्तद् रोदसी शृणुतं विश्वमिन्मे स्वाहा।।11।। (अथर्व. 20/91/11)

ओम्, समास्त्वाग्न ऋतवो वर्धयन्तु संवत्सरा ऋषयो यानि सत्या। सं दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वा आभाहि प्रदिशश्चतस्रः स्वाहा।।12।। (अथर्व. 2/6/1/ यजु. 26/1)

ओम्, आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधि निधेह्यस्मै। रायस्पोषं सवितरासुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम् स्वाहा।।13।। (अथर्व. 2/29/2)

आत्मपावनं सूक्तम्

ओम, पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुषा। पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेणशतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै ।।1 ।।

अग्नऽआयूंषि पवसऽआ सुवोर्जमिषं च नः।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ।।2 ।।

पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ।।3 ।।

पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेण देव दीद्यत्।
अग्ने क्रत्वा क्रतूँ १। रनु ।।4 ।।

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा।
ब्रह्म तेन पुनातु मा ।।5 ।।

पवमानः सो ऽ अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः।
यः पोता स पुनातु मा ।।6 ।।

उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च। मां पुनीहि विश्वतः ।।7 ।। (यजु. 19/37-43)

येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा।
तेन सहस्र-धारेण पावमानीः पुनन्तु नः ।।8 ।। (समा. 1302)

यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम्।
अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳ१ हसः ।।9 ।।

यदि दिवा यदि नक्तमेना छं सि चकृमा वयम्।
वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वँ हसः।।10।।

यदि जाग्रद्यदि स्वप्न ऽ एना छं सि चकृमा वयम्।
सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँहसः।।11।।

(यजु॰ 20/14-16)

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधिधार्मणि तस्यावयजनमसि।।12।। (यजु॰ 20/17)

देवकृतस्यैनसोवयजनमसि मनुष्यकृतस्यैनसोवयजनमसि पितृकृतस्यैनसोवयजनमस्यात्मकृतस्यैनसोवयजनमस्येनस ऽ एनसोवयजनमसि। यच्चाहमेनो विद्वाँश्चकार यच्चाविद्वाँस्तस्य सर्वस्येन सोऽवयजनमसि।।13।।

(यजु॰ 8/13)

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसो ऽ ध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः।।14।।

समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी।।15।।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।।16।।

(यजु॰ 10/190/1-3)

वैदिक-श्री सूक्तम्

ओम्, वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।1।।

प्राणश्च मे ऽ पानश्च मे व्यानश्च मे ऽ सुश्च मे चित्तं च म ऽ आधीतं च मे वाक् च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।2।।

ओजश्च मे सहश्च म ऽ आत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मे ऽ ङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परूꣳषि च मे शरीराणि च मऽ आयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।3।।

ज्यैष्ठ्य च म ऽ आधिपत्यं च मे मन्युश्च मे भामश्च मे ऽ मश्च मे ऽ म्भश्च मे जेमा च मे महिमा च मे वरिमा च मे प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमा च म वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।।4।।

(यजु. 18/1-4)

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।
सनिं मेधामयासिषꣳस्वाहा ।।5।।

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।6।।

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा।।7।।

इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम्।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा।।8।।

(यजु. 32/13-16)

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय। पशूना ꣳ रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा।।9।।

(यजु. 39/4)

कया नश्चित्रऽआभुवदूती सदावृधः सखा।
कया शचिष्ठया वृता।।10।। (यजु. 36/4)

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्य्स्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम ऽ उक्तिं विधेम ।।11।। (यजु. 5/36)

दिवो वा विष्ण ऽ उत वा पृथिव्या महो वा विष्ण ऽ उरोरन्तरिक्षात्। उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद्विष्णवे त्वा।।12।। (यजु. 5/19)

भूरिदा भूरि देहि नो मा दभ्रं भूर्या भर।
भूरि घेदिन्द्र दित्ससि।।13।। (ऋ. 4/32/20)

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे। पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्।।14।। (ऋ. 2/21/6)

भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्।।15।। (ऋ. 10/121/10)

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं म ऽ इषाण सर्वलोकं म ऽ इषाण ।।16।। (यजु. 31/22)



वैदिक-सरस्वती-सूक्तम्

ओम्, पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धियावसुः।।1।।
चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्।
यज्ञं दधे सरस्वती।।2।।
महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना।
धियो विश्वा वि राजति।।3।। (ऋ॰ 1/3/10-12)
सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्।
सनिं मेधामयासिषम्।।4।। (ऋ॰ 1/18/6)
यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।5।।
मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे
स्वाहा।।6।। (यजु. 32/14,15)
अम्बितमे नदीतमे देवतिमे सरस्वति।
अप्रशस्त इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि।।7।।
त्वे विश्वा सरस्वती श्रितायूंषि देव्याम्।
शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः।।8।।

(ऋ॰ 2/41/16,17)

प्र णो देवी सरस्वती वाजेभि र्वाजिनीवती।
धीनामवित्र्यवतु।।9।। (ऋ. 6/61/4)
यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते।
इन्द्रं न वृत्रतूर्ये।।10।।
त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि।
रदा पूषेव नः सनिम्।।11।।
उत स्या नः सरस्वति घोरा हिरण्यवर्तनिः।
वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम्।।12।।
उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा।
सरस्वती स्तोम्या भूत्।।13।। (ऋ. 6/61/4-7,10)
सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने।
सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती दाशुषे वार्यदात्।।14।।
सरस्वति या सरथं ययाथ स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती।
आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयस्वानमीवा इष आ
धेह्यस्मे।।15।।

सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः।
सहस्रार्घमिळो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानेषु
धेहि।।16।। (ऋ. 10/17/7-9)

वैदिक-सुमंगलं-सूक्तम्

ओम्, ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।।1।।

(यजु. 40/1)

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंङ्गैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं
यदायुः।।2।। (यजु. 25/21)

शं नो वातः पावताꣳशं नस्तपतु सूर्यः।
शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो ऽ अभिवर्षतु।।3।।

दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि
समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।।4।। (यजु. 36/10, 18)

मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम्।
क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान्नो अस्त्वरिष्यन्तो अन्वेनं चरेम।।5।।

(अथर्व. 20/143/8)

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते।।6।।

(ऋ. 10/191/2)

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह
चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो
हविषा जुहोमि।।7।।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।8।।

(ऋ॰ 10/191/3, 4)

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्योऽअन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।।9।।
अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्।।10।।
मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।11।।
येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः।।12।।
ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः
सधुराश्चरन्तः। अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत
सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि।।13।।

समानी प्रपा वो ऽ न्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि। सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः।।14।।

सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान्। देवा इवामृतं रक्षमाणाः सायं प्रातः सौमनसो वो अस्तु।।15।। (अथर्व. 3/30/1-7)

द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ् शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ँ् शान्ति शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।16।। (यजु. 36/17)

वैदिक-संजीवनं-सूक्तम्

ओम्, त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।1।।

(यजु. 3/60)

सर्वो वै तत्र जीवति गोरश्वः पुरुषः पशुः।
यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधिर्जीवनाय कम्।।2।।

(अथर्व. 8/2/25)

तनूपाऽअग्ने ऽ सि तन्वं मे पाह्यायुर्दा ऽ अग्नेस्यायुर्मे देहि वर्चोदा ऽ अग्ने ऽ सि वर्चो मे देहि। अग्ने यन्मे तन्वा ऽ ऊनं तन्मऽआपृण।।3।।

इन्धानास्त्वा शत ँ् हिमा द्युमन्त ँ् समिधीमहि। वयस्वन्तो वयस्कृत ँ् सहस्वन्तः सहस्कृतम्। अग्ने सपत्नदम्भनमदब्धासो ऽ अदाभ्यम्। चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय।।4।। (यजु. 3/17-18)

पुनर्मनः पुनरायुर्म ऽ आगन्पुनः प्राणः पुनरात्मा मऽआगन् पुनश्चक्षुः श्रोत्रं म ऽ आगन्। वैश्वानरोऽ अदब्धस्तनूपा ऽ अग्निर्नः पातु दुरितादवद्यात्।।5।।

प्राणश्च मे ऽ पानश्च मे व्यानश्च मे ऽ सुश्च मे चित्तं च म ऽ आधीतं च मे वाक्च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।7।।

ओजश्च मे सहश्च मऽआत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मे ऽ ङ्गानि च मे ऽस्थीनि च मे परु ॐ षि च मे शरीराणि च म ऽ आयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।।8।। (यजु. 18/2,3)

तेजो ऽ सि तेजो मयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि (यजु. 4/15)

ऋचं वाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम प्राणं प्रपद्ये चक्षुः श्रोत्रं प्रपद्ये। वागोजः सहौजो मयि प्राणापानौ।।6।।

(यजु. 36/1

बलमसि बलं मयि धेह्योजोस्योजो मयि धेहि मन्युरसि मन्युं मयि धेहि सहो ऽ सि सहो मयि धेहि।।9।।

(यजु॰ 19/9)

तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुश ँ् स मा न ऽ आयुः प्रमोषीः।।10।। (यजु॰ 18/49)

प्राणं मे पाह्यपानं मे पाहि व्यानं मे पाहि चक्षुर्म ऽ उर्व्या विभाहि श्रोत्रं मे श्लोकय। अपः पिन्वौषधीर्जिन्व द्विपादव चतुष्पात्पाहि दिवो वृष्टिमेरय।।11।। (यजु॰ 14/8)

परं मृत्यो ऽ अनुपरेहि पन्थां यस्ते ऽ अन्य ऽ इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजा ँ रीरिषो मोत वीरान्।।12।। (यजु॰ 35/7)

इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो ऽ अर्थमेतम् शतं जीवन्तु शरदः पुरुचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन।।13।। (यजु॰ 35/15)

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैरस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।14।। (यजु॰ 25/21)

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ् शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।।15।।

(यजु॰ 36/24)

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो ऽ अस्तु त्र्यायुषम्।।16।।

(यजु. 3/62)

वैदिक-वाणिज्यसूक्तम्

ओम्, इन्द्रमहं वणिजं चोदयाामि स न एतु पुर एता नो अस्तु। नुदन्नरातिं परिपन्थिनं मृगं स ईशानो धनदा अस्तु मह्यम्।।1।।

ये पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति। ते मा जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि।।2।।

इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तरसे बलाय यावदीशे ब्रह्मणा वन्दमान इमां धियं शतसेयास देवीम्।।3।।

इमामने शरणिं मीमृषो ना यमध्वानमगाम दूरम्। शुनं नो अस्तु प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु। इदं हव्यं संविदानौ जुषेथां शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च।।4।।

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः। तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्ने सातघ्नो देवान्हविषा निषेध।।5।।

येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः। तस्मिन्म इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः।।6।।

उप त्वा नमसा वयं होतर्वैश्वानरः स्तुमः।
स नः प्रजास्वात्मसु गोषु प्राणेषु जागृहि।।7।।
विश्वहा ते सदमिद् भरेमाश्वायेव तिष्ठते जातवेदः।
रायस्पोषेण समिषा मदन्तो मा ते अग्ने प्रतिवेशा
रिषाम्।।8।। (अथर्व. 3/15/1-8)

अभि नो नर्यं वसु वीरं प्रयतदक्षिणम्।
वामं गृहपतिं नय।।9।।
अदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन्दानाय चोदय।
पणेश्चिद्वि म्रदा मनः।।10।। (ऋ. 6/53/2-3)
सं पूषन्विदुषा नय योऽ अंजसानुशासति।
य ऽ एवेदमिति ब्रवत्।।11।।
समु पूष्णा गमेमहि यो गृहां ऽ अभिशासति।
इम ऽ एवेति च ब्रवत्।।12।।
पूष्णश्चक्रं न रिष्यति न कोशो ऽ व पद्यते।
नो ऽ अस्य व्यथते पविः।।13।। (ऋ. 6/54/1-3)
शृण्वन्तं पूषणं वयमिर्यमनष्टवेदसम्।
ईशानं राय ऽ ईमहे।।14।।
पूषन्तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन।
स्तोतारस्त ऽ इह स्मसि।।15।।
परि पूषा परस्ताद्धस्तं दधातु दक्षिणम्।
पुनर्नो नष्टमाजतु।।16।। (यजु. 6/54/8-10)

मंगल - कामना

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभागभवेत्।।

सबका भला करो भगवान्, सब पर दया करो भगवान्।
सब पर कृपा करो भगवान् सबका सब विधि हो कल्याण।।
सबको दो भक्ति का दान, सब को दो वेदों का ज्ञान।
सबको स्वस्थ करो भगवान्, देखें भद्र बनें महान्।।

हे ईश! सब सुखी हों, कोई न हो दुःखारी।
सब हो निरोग भगवन्, धन-धान्य के भण्डारी।
सब भद्र भाव देखें, सन्मार्ग के पथिक हों।
दुःखिया न हो कोई होवे, सृष्टि में प्राणधारी।।

सब वेद पढ़ें, सुविचार बढ़ें, बल पाय वढें, नित ऊपर को
अविरुद्ध रहें, ऋजु पन्थ गहें, परिवार कहें वसुधा-भर को।
ध्रुव- धर्म धरें, पर-दुःख हरें, तन त्याग, तरें भवसागर को।
दिन फेर पिता, वर दे सविता, हम आर्य करें जगती भर को।।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव, सर्वं मम देव देव।।

मात तुम्ही गुरु-तात तुही, मित भ्रात तुही धन-धान्य हमारो।
ईश तुही जगदीश तुही, मम शीतू तुही प्रभु राखन हारो।
राव तुही उमराव तुही, सत्भाव तुही प्रभु नैन हमारो।
सार तुही करतार तुही, घरबार तुही परिवार हमारो।

संगठन सूक्त

ओम् , सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।।1।।

हे प्रभो! तुम शक्तिशाली, हो बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं, कीजिये धन-वृष्टि को।।

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे सं जानाना उपासते।।2।।

प्रेम से मिलकर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम, कर्त्तव्य के मानी बनो।।

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।।3।।

हों विचार समान सब के, चित्त-मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पा सब नेक हों।।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।4।।

हों सभी के दिल तथा, संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़े सुख सम्पदा।।

सत्संग भजन

राष्ट्रीय प्रार्थना

ओम्, आ ब्रह्मन् ब्रह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्। आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्। दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः। सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्। निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।। (यजु॰ 22/21)

ब्रह्मन्! सुराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्म तेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी।।

होवें दुधारु गौएं, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही।।

बलवान सभ्य योद्धा, यजमान पुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवें।।

फल फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हों योग क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी।

भजन

विनती तुझसे हे भगवान्, हमको दे ऐसा वरदान।।
ऐसी कृपा करो अखिलेश, उन्नत होवे भारत देश।
जगभर में पावे सम्मान, हमको दे............

ब्राह्मण यहां यशस्वी होवे, तेजस्वी, वर्चस्वी होवें।
होवें ज्ञानवान् विद्वान्, हमको दे............

क्षत्रिय शूर महारथी होवें, निपुण शस्त्र चालन में होवें।
रण विजयी अतुलित बलवान् हमको ....

बना योजना नित्य विशाल, करें देश को मालामाल।
वैश्य बने दानी धनवान् हमको दे............

गौवें होवें खूब दुधारु, खूब बहावें अमृतधार।
सब जन करें अमृत का पान, हमको दे............

वृषभ महा बलशाली होवें, भार प्रचुर मात्रा में ढोवें।
द्रुतगामी होवें सब यान, हमको दे............

सती और साध्वी महिला हो, रूपवती विदुषी कुशला हों।
होवें सरल गुणों की खान, हमको दे............

सभी देशवासी हो सभ्य, पहचानें अपना कर्त्तव्य।
वीर जनक होवें यजमान हमको दे............

कृषि हेतु जब हम चाहें, जलधारा बरसावें।
प्रचुर यहां होवे धनधान, हमको दे............

सब ही स्वस्थ सुखी समृद्ध, होवें बालयुवा और वृद्ध।
प्राप्त करें सब सुख सम्मान, हमको दे............

यज्ञ-प्रार्थना

पूजनीय प्रभो! हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये।
छोड़ देवें छल-कपट को, मानसिक बल दीजिये।।1।।

वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हो मग्न सारे, शोक सागर से तरें।।2।।

अश्वमेधादिक रचाएँ, यज्ञ पर-उपकार को।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को ।।3।।

नित्य श्रद्धा भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।
रोग-पीड़ित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें।।4।।

भावना मिट जाए मन से पाप अत्याचार की।
कामनाएँ पूर्ण होवें यज्ञ से नर-नार की।।5।।

लाभकारी हों हवन हर जीवधारी के लिए।
वायु जल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किए ।।6।।

स्वार्थ-भाव मिटे हमारा प्रेम-पथ विस्तार हो।
इदन्न मम का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो।।7।।

हाथ जोड़ झुकाए मस्तक वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणा रुप करुणा आपकी सब पर रहे।।8।।

वन्दना

सुखी बसे संसार सब दुखिया रहे न कोय।
यह अभिलाषा हम सबकी भगवन् पूरी होय।

विद्या, बुद्धि तेज, बल, सबके भीतर होय।
दूध पूत धन धान्य से, वंचित रहे न कोय।।

आपकी भक्ति प्रेम से, मन होवे भरपूर।
राग द्वेष से चित्त मेरा, कोसों भागे दूर।।

मिले भरोसा नाम का, हमें सदा जगदीश।
आशा तेरे धाम की, बनी रहे मम ईश।

पाप से हमें बचाइये, करके दया दयाल।
अपना भक्त बनाय के, सबको करो निहाल।।

दिल में दया, उदारता, उर में प्रेम अपार।
हृदय में धैर्य वीरता, सबको दो करतार।।

नारायण तुम आप हो, पाप के मोचनहार।
क्षमा करो अपराध सब, भव से कर दो पार।।

हाथ जोड़ विनती करूँ, सुनिये कृपानिधान।
साधु-संगत, सुख दीजिए, दया, नम्रता दान।।

मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सब तोर।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागत है मोर।।

ओम् नाम सबसे बड़ा इससे बड़ा न कोय।
जो इसका सुमिरन करें, शुद्ध आत्मा होय।।

वैदिक आरती

ओम् जय जगदीश पिता, प्रभु जय जगदीश पिता।
विश्व विरंच विधाता, जगत्राता, सविता।।ओं।।

अनन्त अनादि अजन्मा, अविचल अविनाशी।
सत्य सनातन स्वामी, शंकर सुख राशी।।ओं।।

सेवक जन सुखदायक, जननायक तुम हो।
शुभ सुख शान्ति सुमंगल, वरदायक तुम हो।।ओं।।

मैं सेवक शरणागत, तुम मेरे स्वामी।
हृदय पटल में प्रकटो, प्रभु अन्तरयामी।। ओं।।

काम, क्रोध, मद, मोह, कपट, छल, व्यापे नहीं मन में।
लगन लगे मम मन की, गुण तेरे वर्णन में ।।ओं।।

नित्य निरञ्जन निशदिन तेरा ही जाप करें।
तव प्रताप से स्वामी, तीनों ही ताप हरें।।ओं।।

पतित-उद्धारण तारण, शरणागत तेरी।
भूले न भटके भ्रम में, निर्मम गति मेरी ।।ओं।।

शुद्ध बुद्धि से मन में, तेरा ही वरण करें।
सब विधि छल बल तज के तेरी शरण पड़ें।।ओं।।

आरती

ओम् जय जगदीश हरे, प्रभु जय जगदीश हरे।
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे।।ओ०।।

जो ध्यावे फल पावे, दुख विनशे मन का।
सुख सम्पत्ति घर आवै, कष्ट मिटे तन का।।ओ०।।

मात पिता तुम मेरे, शरण गहूं किसकी।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ मैं जिसकी।।ओ०।।

तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सब के स्वामी।।ओ०।।

तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्त्ता।
मैं सेवक तुम स्वामी, कृपा करो भर्ता।।ओ०।।

तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपति।
किस विधि मिलूं दयामय, तुमको मैं कुमति।।ओ०।।

दीनबन्धु दुखःहर्ता, तुम रक्षक मेरे।
करुणा हस्त बढ़ाओं, शरण पड़ा तेरे।।ओ०।।

विषय-विकार मिटाओं, पाप हरो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।।ओ०।।

भजन

शरण प्रभु की आवो रे, यही समय है प्यारे।।
आवो प्रभु गुण गावो रे, यही समय है प्यारे।।

उदय हुआ ओ३म् नाम का भानु, आवो दर्शन पावो रे।।

अमृत झरना झरता है इससे, पीके अमर हो जावो रे।।

छल कपट और झूठ को त्यागो, सत्य में चित्त लगावो रे।।
हरि की भक्ति बिन नहीं मुक्ति, दृढ़ विश्वास जमावो रे।।

करलो नाम प्रभु का सुमरिन, नहीं पीछे पछताओ रे।।
छोटे बड़े सब मिलकर खुशी से, गुण ईश्वर के गावो रे।।

विनय

शरण अपनी में रख लीजे, दयामय दास हूं तेरा।
तुझे तज कर कहां जाऊं, हितू को और है मेरा।।
भटकता हूं मैं मुद्दत से, नहीं विश्राम पाता हूं।
दया की दृष्टि से देखो, नहीं तो डूबता बेड़ा।।
सताया राग द्वेषों का, तपाया तीन पापों को।
दुःखाया जन्म मृत्यु का, हुआ तंग हाल है मेरा।
दुःखों को मैटने वाला, तुम्हारा नाम सुनकर मैं।
चरण में आ गिरा अब तो, भरोसा नाथ है तेरा।

क्षमा अपराध कर मेरे, .फकत अब आस है तेरी।
दया हम भक्तों पै करके, बना ले नाथ निज चेरा।।

''बलदेव नौष्ठिक''

भजन

पितु मातु सहायक स्वामी सखा, तुम ही इक नाथ हमारे हो।
जिनके कुछ और आधार नहीं, तिनके तुम ही रखवारे हो।।1।।
सब भाँति सदा सुखदायक हो, दुख दुर्गुण नाशन हारे हो।
प्रतिपाल करो सगरे जग को, अतिशय करुणा उर धारे हो।।2।।
भुलि हैं, हम ही तुमको तुम तो, हमरी सुधि नाहिं बिसारे-हो।
उपकारन को कुछ अन्त नहीं, छिन ही छिन जो विस्तारे हो।।3।।
महाराज महा महिमा तुम्हारी, समुझें बिरले 'बुधिवारे' हो।
शुभ शान्ति-निकेतन प्रेमनिधे, मन-मन्दिर के उजियारे हो।।4।।
यहि जीवन के तुम जीवन हो, इन प्राणन के तुम प्यारे हो।
तुम सो प्रभु पाय प्रताप हरि, केही के अब और सहारे हो।।5।।

भजन

मिलता है सच्चा सुख केवल, भगवान तुम्हारे चरणों में
है विनती यही, छिन-छिन, पल-पल रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में।
मिलता..........

यदि वैरी सब संसार बने, मेरा जीवन मुझ पर भार बने।
चाहे मौत गले का हार बने, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में।।
मिलता..........

चाहे संकट ने आ घेरा हो, चाहे चारों ओर अंधेरा हो।
पर चित्त न डगमग मेरा हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में।।
मिलता..........

चाहे अग्नि में मुझे जलना हो, चाहे काँटों पर भी चलना हो।
चाहे छोड़ के देश बिछुड़ना हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में।।
मिलता..........

जिह्वा पर तेरा नाम रहे, तेरी याद सुबह और शाम रहे।
बस काम यह आठों धाम रहे, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में।।
मिलता..........

भजन

चंचल मन नित ओ३म् जपा कर, ओ३म् जपा कर ओ३म्।
पल 2 छिन 2 घड़ी 2 निशदिन, ओ३म् जपा कर ओ३म्।।
प्रातः समय की सुख बेला में, सन्ध्या की पुलकित रजनी में।
रोम रोम से, निकले तेरे, ओ३म् जपा कर ओ३म्।।
गहरा सागर टूटी नैया, जीवन तरनी ओ३म् खिवैया।
पार करेंगे ओ३म्, ओ३म् जपा कर ओ३म्।।
सार तत्व की खोज किये जा, नाम सरस रस रोज पिये जा।
पार करेंगे ओ३म्, ओ३म् जपा कर ओ३म्।।

भजन

ओम् है जीवन हमारा, ओम् प्राणाधार है।
ओम् है कर्त्ता विधाता ओम् पालन हार है।।
ओम् है दुःख का विनाशक, ओम् सर्वानन्द है।
ओम् है बल तेज धारी, ओम् करुणाकन्द है।
ओम् सब का पूज्य है, हम ओम् का पूजन करें।
ओम् ही के ध्यान से, हम शुद्ध अपना मन करें।।
ओम् के गुरु मन्त्र जपने से रहेगा शुद्ध मन।

बुद्धि दिन प्रतिदिन बढ़ेगी, धर्म में होगी लगन।।
ओम् के जप से हमारा ज्ञान बढ़ता जायेगा।
अन्त में वह ओम् हमको, मुक्ति तक पहुंचायेगा।

भजन

भरोसा कर तू ईश्वर पर, तुझे धोखा नहीं होगा।
यह जीवन बीत जायेगा, तुझे रोना नहीं होगा।।1।।
कभी दुःख है कभी सुख है, यह जीवन धूप छाया है।
हँसी में ही बिता डालो, बितानी ही, यह माया है।।2।।
जो सुख आये तो हस देना, जो दुःख आये तो सह लेना।
न कहना कुछ भी तू जग से, प्रभु से ही तू कह लेना।।3।।
ये कुछ भी तो नहीं जग में, तेरे वश कर्म की माया।
तू खूद ही धूप में बैठा, लखे निज रूप की छाया।।4।।
कहाँ यह था, कहाँ तू था, कभी तो सोच ओ बन्दे।
झुका कर शीश को कह दे, प्रभो वन्दे, प्रभो वन्दे।।5।।

(तत्व ज्ञान से)

भजन

मुझे ऐसा बना दो मेरे पिता, जीवन में लगे ठोकर न कहीं।
जाने अनजाने भी मुझसे, नुकसान किसी का हो न कहीं।।मुझे।।

उपकार सदा करता जाऊं, दुनिया अपकार भले ही करे।
बदनामी न हो जग में मेरी, कोई नाम भले ही न दे कहीं।।मुझे।।

तू ही बस मेरा ऐसा है, दुःख में भी साथ नहीं तजता।
दुनिया मुझे प्यार करे न करे, खोऊं तेरा भी न प्यार कहीं।।मुझे।।

जो तेरा बन रहता है, काँटों में फूल सा खिलता है।
कितने ही कांटे पांव चुभे, पर फूल भी हों काटें ही नहीं।।मुझे।।
मन हो मधुपूर्ण कलश मेरा, आँखों में ज्योति छलकती हो।
तुमसे मधु ऐसा पीने को, जगता ही रहूं सोऊं न कहीं।।मुझे।।
मैं क्या हूं? राह मेरी क्या है? यह सत्य सदा मैं समझ सकूं।।
इस राह पै चलते-चलते कभी, मेरे पांव थके न, रुके न कहीं।।मुझे।।

भजन

वह शक्ति हमें दो दयानिधे, कर्त्तव्य मार्ग पर डट जावें।
पर सेवा पर उपकार में हम,निज जीवन सफल बना जावें।।
हम दीन दुःखी निबलों विकलों के सेवक बन संताप हरें।
जो हैं अटके भूले भटके, उनको तारें खुद तर जावें।।
छल-दम्भ द्वेष पाखण्ड झूठ, अन्याय से निशिदिन दूर रहें।
जीवन हो शुद्ध सरल अपना, शुचि प्रेम सुधारस बरसावें।।
निज आन बान मर्यादा का, प्रभु ध्यान रहे अभिमान रहे।
जिस देश जाति में जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जावें।।

भजन

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में।
है जीत तुम्हारे हाथों में और हार तुम्हारे हाथों में।। अब।।
मेरा निश्चय है एक यही, इस बार तुम्हें पा जाऊं मैं।
अर्पण करदूं जीवन भर का सब प्यार तुम्हारे हाथों में ।।अब।।
या तो मैं जग से दूर रहूं और जग में रहूं तो ऐसे रहूं।
इस पार तुम्हारे हाथों में, उस पार तुम्हारे हाथों में ।।अब।।

यदि मानुष ही मुझे जन्म मिले, तब तव चरणों का पुजारी बनूं।
मुझ सेवक की इक-इक रग का हो तार तुम्हारे हाथों में ।।अब।।

जब-जब संसार का बन्दी बन, दरबार में तेरे आऊं मैं।
तब हो मेरे कर्मों का निर्णय, सरकार तुम्हारे हाथों में।।अब।।

मुझ में तुझ में है भेद यही, मैं नर हूं तुम नारायण हो।
मैं हूं संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में।।अब।।

भजन

हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन, उसे कोई क्लेश लगा न रहा।
जब ज्ञान की गंगा में नहाया, तो मन में मैल जरा न रहा।

परमात्मा को जब आत्मा में, लिया देख ज्ञान की आंखों से।
प्रकाश हुआ मन में उसके, कोई इससे भेद छिपा न रहा।।

पुरुषार्थ ही इस दुनिया में, सब कामना पूरी करता है।
मन चाहा सुख उसने पाया, जो आलसी बन के पड़ा न रहा।।

दुःखदायी हैं सब शत्रु हैं, ये विषय हैं जितने दुनिया के।
वही पार हुआ भवसागर ये, जो जाल में इनके फंसा न रहा।।
यहां वेद की विरूद्ध जब मत फैले, प्रकृति की पूजा जारी हुई।
जब वेद की विद्या लुप्त हुई, फिर ज्ञान का पाँव जमा न रहा।।

यहां बड़े-बड़े महाराज हुए, बलवान हुए विद्वान् हुए।
पर मौत के पंजे से 'केवल', कोई दुनिया में आके बचा न रहा।।

भजन

अजब हैरान हूँ भगवन्! तुम्हें क्यों कर रिझाऊं। मैं।
कोई वस्तु नहीं ऐसी, जिसे सेवा में लाऊं मैं। ।अजब०।।

करूँ किस तरह से आवाहन कि, तुम मौजूद हो हर जाँ।
निरादर है बुलाने को, अगर घण्टा बजाऊं मैं।।।।अजब०।।

तुम्हीं हो मूर्तियों में भी, तुम्हीं व्यापक हो फूलों में।
भला भगवान पर भगवान को, क्यों कर चढ़ाऊं मैं। ।अजब०।।

लगाना भोग कुछ तुमको, यह एक अपमान करना है।
खिलाता है जो सब जग को, उसे कैसे खिलाऊं मैं। ।अजब०।।

तुम्हारी ज्योति से रोशन हैं, सूरज चांद और तारे।
महा अन्धेर है कैसे, तुम्हें दीपक, दिखाऊं मैं। ।अजब०।।

भुजायें हैं, न गर्दन है, न सीना है न पेशानी।
तुम हो निर्लेप नारायण! कहां चन्दन लगाऊं मैं। ।अजब०।।

भजन

तेरे दर को छोड़ कर किस दर जाऊँ मैं।
सुनता मेरी कौन है किसे सुनाऊँ मैं।
जब से याद भुलाई तेरी लाखों कष्ट उठाये हैं।
क्या जानूं इस जीवन अन्दर कितने पाप कमाये हैं।
हूं शरमिन्दा आप से क्या बतलाऊं मैं। ।अजब०।।
मेरे पाप कर्म ही तुझ से प्रीति न करने देते हैं।
कभी जो चाहूँ मिलूँ आपसे, रोक मुझे ये लेते हैं।

कैसे स्वामी आपके दर्शन पाऊं मैं।।तेरे॰।।
तू है नाथ वरों का दाता मुझसे सब वर पाते हैं।
ऋषि मुनि और योगी सारे तेरे ही गुण गाते हैं।
छींटा दे दो ज्ञान का होश में आऊं मैं।।तेरे॰।।
जो बीती सो बीती लेकिन बाकी उमर संभालू मैं।
प्रेमपाश में बंधा आपके गीत प्रेम के गा लूं मैं।
जीवन प्यारे 'देश' का सफल बनाऊं मैं।।तेरे॰।।

भजन

हम सब मिलकर दाता आये तेरे दरबार।
भर दे झोली सबकी तेरे पूरण भण्डार।।
होवे जब सन्ध्या काल निर्मल होके तत्काल।
अपना मस्तक झुका के करके तेरा ख्याल।
तेरे दर पे आके बैठे सारा परिवार।।1।।

लेके दिल में फरियाद करते हम तुमको याद।
जब हों संकट की घड़ियाँ माँगें तुमसे इमदाद।
सबसे बढ़कर जग में तेरा ऊँचा आधार।।2।।

चाहे दिन हों विपरीत होवे तुमसे ही प्रीति।
पूरी श्रद्धा से गावें तेरी भक्ति के गीत।
होवे सबका प्रभुजी तेरे चरणों में प्यार ।।3।।

तू है दुनियाँ का वाली करता सबकी रखवाली।
हम हैं रंग-रंग के पौधे तू है हम सबका माली।
'पथिक' बगीचा है यह तेरा सुन्दर संसार।।4।।

भजन

तू है सच्चा पिता सारे संसार का, ओ३म् प्यारा।
तू ही-तू ही है रक्षक हमारा।।

चांद सूरज सितारे बनाये, पृथ्वी आकाश पर्वत सजाए।
अन्त पाया नहीं, तेरा पाया नहीं, पारवारा।। तू ही...

पक्षी गण राग सुन्दर हैं गाते, जीव जन्तु भी सर हैं झुकाते।
उनको ही सुख मिला, तेरी राह पर चला, जो प्यारा।। तू ही...

पाप-पाखण्ड हमसे छुड़ाओ, वेद मार्ग पै हमको चलाओ।
लगे भक्ति में मन, करे संध्या हवन, जगत् सारा।। तू ही...
अपनी भक्ति में मेरा मन लगाना, कष्ट हम सब के सब तुम मिटाना।
दुनियाँ धन वालों का और कंगालों का, तू सहारा।। तू ही...

भजन

ईश्वर तुम्हीं दया करो, तुम बिन हमारा कौन है।
दुर्बलता दीनता हरो, तुम बिन हमारा कौन है।
जग के बनाने वाला तू, दुःख को मिटाने वाला तू।
बिगड़ी बनाने वाला तू, तुम बिना हमारा कौन है।।
माता तू ही तू ही पिता, बन्धु तू ही तू ही सखा।
केवल तुम्हारा आसरा, तुम बिन हमारा कौन है।
तेरा भजन तेरा मनन, तेरी ही धुन तेरी लगन।
तेरी शरण में आये हम, तुम बिन हमारा कौन है।।
तेरी दया को छोड़ कर कुछ भी नही हमें खबर।
जायें तो जायें हम किधर, तुम बिन हमारा कौन है।।

बालक सभी हैं हम तेरे, तू है पिता परमात्मा।
हम पर हो बस तेरी दया, तुम बिन हमारा कौन है।

भजन

मेरे दाता के दरबार में, सब लोगों का खाता,
जो कोई जैसी करनी करता, वैसा ही फल पाता।।
क्या साधु, क्या सन्त गृहस्थी, क्या राजा, क्या रानी।
प्रभु की पुस्तक में लिखी है, सबकी कर्म कहानी।
अन्तर्यामी अन्दर बैठा, सबका हिसाब लगाता।।1।। मेरे....

यहां न चलती रिश्वत खोरी, चले नहीं चालाकी।
मेरे प्रभु के लेन देन की, रीत बड़ी है बाँकी,
पुण्य का बेड़ा पार करे वह पाप की नाव डुबाता।।2।। मेरे...

बड़े-बड़े कानून प्रभु के बड़ी बड़ी मर्यादा,
किसी को कौड़ी कम नहीं देता, नहीं किसी को ज्यादा,
इसीलिए तो वह दुनियाँ का जगत्पति कहलाता ।।3।। मेरे...

करता है वह न्याय सभी का इक आसन पै डटके,
प्रभु का न्याय कभी न पलटे, लाख कोई सिर पटके,
समझदार तो चुप रह जाता, मूरख शोर मचाता।।4।। मेरे...

उजली करनी कर ले बन्दे, कर्म न करियो काला,
लाख आंख से देख रहा है, वह प्रभु देखने वाला,
उसकी तेज नजर से बन्दे, कोई नहीं बच पाता।।5।। मेरे...

भजन

ओम् नाम के हीरे मोती मैं, बिखराऊं गली गली।
ले लो रे कोई ओम् का प्यारा, आवाज लगाऊं गली गली।।
माया के दीवानों सुन लो, इक दिन ऐसा आयेगा।
सुन्दर काया माटी होगी, चर्चा होगी गली-गली।।1।।
मित्र प्यारे सगे सम्बन्धी, इस दिन तुझे भुलायेंगे।
कल जो कहते थे अपना, अग्नि में मुझे जलायेंगे।
दो दिन का यह चमन लिखा है, फिर मुरझाये कली कली।।2।।
क्या करता है मेरी मेरी, तज दे इस अभिमान को।
छोड़ जगत के झूठे धन्धे, जपले प्रभु के नाम को।
गया समय फिर हाथ न आये, तब पछताये घड़ी घड़ी।।3।।
जिसको अपना कह कह करके, मूर्ख तू इतराता है।
छोड़ दे बन्दे साथ, विपद में साथ नहीं कोई जाता है।
दो दिन का यह रैन बसेरा, आखिर होगी चला चली।।4।।

भजन

उस प्रभु की है महिमा बड़ी, आज आई जो ये शुभ घड़ी।
यज्ञ से घर सुशोभित हुआ, वेद मंत्रों की बोली कड़ी।।
आज का कितना पावन दिवस, नाम शिशु का धराया गया।
उस निराकार जगदीश की, याद में मन लगाया गया।
जिसने सबकी है विपदा हरी, आज आई है ये शुभ घड़ी।।
शिशु नीरोग तन से रहे, अवगुणों से सदा दूर हो।
अरबों खरबों का मालिक बने, घर में सम्पत्ति भरपूर हो।

द्वार पे यान हों तेरे खड़े, आज आई है ये शुभ घड़ी।।
प्राप्त विद्या विभव को करे, सुखमय सारा ही परिवार हो।
शत वर्षों की आयु मिले, देश और धर्म से प्यार हो।
न विचारों में हो गड़बड़ी, आज आई है ये शुभ घड़ी।।
मिल के शुभ कामनाओं सहित, दी बधाई मधुरता भरी।
सब ने हृदय से आशीष दे, आज पुष्पों की वर्षा करी।
सुरभित फूलों की लागी झड़ी आज आई है ये शुभ घड़ी।।

भजन

आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित गात हैं गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद।।
मन्दिरों में, कन्दरों में, पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ-सौ बार मुनिवर धन्यवाद।।
करते हैं जंगल में मंगल, पक्षीगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द, मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद।
कूप में, तालाब में, सिन्धु की गहरी धार में।
प्रेम-रस में तृप्त हो करते हैं जलचर धन्यवाद।।
शादियों में कीर्तनों में, यज्ञ और उसव के आदि।
मीठे स्वर से चाहिए करें नारी-नर सब धन्यवाद।।
गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर की स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता कान धर-धन धन्यवाद।।

मंगल कामना

सदा फूलता फलता भगवान् यह याजक परिवार रहे।
रहे प्यार जो किसी से इनकार सदा आप से प्यार रहे।।

(1) मिथ्या कर अभिमान कभी न जीवन का अपमान करें।
देवजनों की सेवा करके वेदामृत का पान करें।
प्रभु आपकी आज्ञा पालन करता हर नर-नार रहे।। सदा...

(2) मिले सम्पदा जो भी इनको उसका मानें आपकी,
घड़ी न आने पावे इनपे कोई भी सन्ताप की।
यही कामना प्रभु आपसे कर हम बारम्बार रहे। सदा...

(3) दुनियाँदारी रहे चमकती धर्म निभाने वाले हों,
सेवा के सांचे में सबने जीवन अपने ढाले हों।
बच्चा-बच्चा परिवार का बन कर श्रवण कुमार रहे।। सदा...

(4) बने रहे सन्तोषी सारे जीवन के हर काल में।
हाल चाल हो कैसा इनका, रहें मस्त हर हाल में।
ताकि 'देश' बसाया इनका सुखदाई संसार रहे।। सदा...

भजन

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है सो खोवत है।
टुक नींद से आखियाँ खोल जरा, और अपने प्रभु से ध्यान लगा।
यह प्रीति करन की रीति नहीं, प्रभु जागत है तू सोवत है।उठ।।
जो कल करना है अज करले, जो अज करना है अब करले।
जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया, फिर पछताए क्या होवत है।।उठ।।
नादान भुगत करनी अपनी, ए पापी पाप में चैन कहाँ?
जब पाप की गठरी शीश धरी, फिर शीश पकड़ क्यों रोवत है।। उठ।।

भजन

वेला अमृत गया आलसी सो रहा बन अभागा।
साथी सारे जगे तू न जागा।।

झोलियां भर रहे भाग्य वाले, लाखों पतितों ने जीवन संभाले।
रंक राजा बने, भक्ति रस में सने, कष्ट भागा।। साथी सारे जगे....
कर्म उत्तम थे नर तन जो पाया, आलसी बनके हीरा लुटाया।
उलटी हो गई मति, करके अपनी क्षति रोने लागा।। साथी सारे जगे...
धर्म वेदों का देखा न भाला, वेला अमृत गया न संभाला।
सौदा घाटे का कर, हाथ माथे पै धर रोने लगा।। साथी सारे जगे...
देश तूने न अब भी विचारा, सर से ऋषियों का ऋण न उतारा।
हंस का रूप था, गंदला पानी पिया, बनके कागा।। साथी सारे जगे...
प्यारे कब तक भटकता रहेगा, गर्भ में आ लटकता रहेगा।
सोच आयेगी कब, जोड़ ईश्वर से अब, अपना तागा।। साथी सारे जगे...
सोया कब तक रहेगा तू भाई, उठ तू करले धर्म की कमाई।
कर्म शुभ अब बना, नित्य सत्संग में जा, न कर नागा।।
साथी सारे जग तू न जागा।।

भजन

आप बिना कौन सुने प्रभु मेरी
कौन सुने प्रभु, कौन सुने प्रभु,
कौन सुने प्रभु मेरी
आप बिन कौन सुने प्रभु मेरी. . . (1)

तुम समर्थ सब सुख के दाता
भव सागर से तुम ही त्राता
भव पार करो नैया मेरी
आप बिन कौन सुने प्रभु मेरी
कौन सुने प्रभु, कौन सुने प्रभु मेरी, आप . . . (2)

दासी की विपदा को हर लीजो-2

आपने ही चरणों में मुझे धर लीजो
अरज करूँ प्रभु तेरी
आप बिन कौन सुने प्रभु मेरी
कौन सुने प्रभु , कौन सुने प्रभु मेरी आप . . . (3)
कहत कबीर शरण मै आयी
अब तो हमरी लाज तुम्हारी
नाथ न लाओ देरी
आप बिन कौन सुने प्रभु मेरी . . . (4)

(ध्वजगीत)

जयति ओ३म् ध्वज व्योम बिहारी।
विश्व-प्रेम प्रतिमा अति प्यारी।।

सत्य सुधा बरसाने वाला, स्नेह सुधा सरसाने वाला।
साम्य-सुमन विकसाने वाला, विश्व विमोहक भव-भयहारी।। जयति...

इसके नीचे बढ़ें अभय मन, सत्पथ पर सब धर्म धुरी जन।
वैदिकपथ का हो शुभ उदयन, आलोकित होवें दिशि सारी।। जयति...

इससे सारे क्लेश शमन हों, दुर्मति दानव द्वेष दमन हों।
अति उज्ज्वल अति पावन मन हों, प्रेमतरंग बहे सुखकारी।। जयति...

इसी ध्वजा के नीचे आकर, ऊँच नीच का भेद भुलाकर।
मिलें विश्व मुद-मंगल गाकर, पन्थाई पाखण्ड बिसारी।। जयति...

इसी ध्वजा को लेकर कर में, भर दें वेद ज्ञान घर-घर में।
सुभग शान्ति फैले जग भर में, मिटे अविद्या की अँधियारी।। जयति...

विश्व-प्रेम का पाठ पढ़ावें, सत्य-अहिंसा को अपनावें।
जग में जीवन ज्योति जगावें, त्यागपूर्ण हो वृत्ति हमारी। जयति...

आर्यजाति का सुयश अक्षय हो, आर्यध्वजा की अविचल जय हो।
आर्य जनों का ध्रुव निश्चय हो, आर्य बनावें वसुधा सारी।। जंयति...

शान्ति कामना

शान्ति कीजिए प्रभु त्रिभुवन में,
जल में थल में और गगन में,
अन्तरिक्ष में अग्नि पवन में,
औषधि, वनस्पति, वन, उपवन में,
सकल विश्व के जड़ चेतन में,
शान्ति कीजिए प्रभु त्रिभुवन में।।
ब्राह्मण के उपदेश वचन में,
क्षत्रिय के द्वारा हो रण में,
वैश्यजनों के होवे धन में
और शूद्र के हो चरणन में,
शान्ति राष्ट्र-निर्माण, सृजन में,
नगर-गाम में और भवन में,
जीव मात्र के तन में मन में,
और जगत के हो कण-कण में,
शान्ति कीजिए प्रभु त्रिभुवन में।।

।।शान्ति पाठ।।

ओम्, द्यौः शान्ति-रन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी रापःशान्ति -रोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्-विश्वेदेवाः शान्तिर्-ब्रह्म शान्तिः, सर्वं शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि।

ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

आर्य समाज के नियम व उद्देश्य

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन का आदि मूल परमेश्वर है।

2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्याकारी दयालू, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।

4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्येश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक, और सामाजिक उन्नति करना।

7. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

परिचय



स्वतन्त्र भारत में 8 दिसम्बर 1946 को राजस्थान के बीकानेर से जनपद में वैदिक साहित्य के परम अनुरागी श्री ठाकुर प्रसाद जी आर्य एवम् श्रीमती समा आर्य के यहां आपका जन्म हुआ। मथुरा शताब्दी के अवसर पर श्रद्धेय स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी की प्रेरणा से आपके माता-पिता ने आपको यज्ञतीर्थ आर्ष गुरुकुल एटा में प्रविष्ट करवाया। जहां आपने आचार्य श्री ज्योतिःस्वरूप चतुर्वेदी के सान्निध्य में व्याकरणाचार्य तक की शिक्षा प्राप्त की। तदनन्तर गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर से विद्या भास्कर, आगरा एवम् राजस्थान विश्वविद्यालयों से क्रमशः संस्कृत व हिन्दी में एम. ए. तथा दिल्ली विश्वविद्यालय से एम. फिल. की उपाधियां प्राप्त की। साथ ही लाल बहादुर संस्कृत विद्यापीठ से शिक्षा शास्त्री की उपाधि प्राप्त की। 1973 में गुरुकुल ततारपुर में आचार्य पद को सुशोभित किया। 1974 में अखिल भारतीय दयानन्द सेवाश्रम संघ की ओर से असम के आदिवासी क्षेत्रों में प्रचारार्थ गये। वहां डी. ए. वी. हाईस्कूल डिफू, कारबी आंग्लांग (असम) में अध्यापन कार्य करते हुए आर्य समाज का प्रचार किया। वहां आपने वैदिक लिसनर फोरम नामक संस्था की स्थापना कर वैदिक मान्यताओं का प्रचार किया तथा आर्य समाज की स्थापना की। अक्तूबर 1979 से आप आर्य समाज राजौरी गार्डन, नई दिल्ली में मानद धर्माचार्य के पद पर निःशुल्क सेवा कर रहे हैं तथा वर्तमान में आप दिल्ली प्रशासन के अन्तर्गत राजकीय विद्यालय में उप प्रधानाचार्य के पद पर कार्यरत हैं। आप वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ, कर्मकाण्ड के ज्ञाता हैं। आपके प्रवचन और कथाएं अत्यन्त सरस, मधुर सारगर्भित और प्रभावशाली होती हैं।